जागोरी की त्रैमासिक पत्रिका

अप्रैल–जून 2008

हम सबला

इस अंक में

औरतें और स्वास्थ्य

हम सबला

अप्रैल-जून 2008

अतिथि संपादक
जया वेलणकर

संपादन एवं अनुवाद
जुही जैन

संपादन सहयोग
जया श्रीवास्तव
कल्याणी
खुर्शीद अनवर
सीमा श्रीवास्तव

मुख पृष्ठ डिज़ाइन सहयोग
बिंदिया थापर

मुख पृष्ठ फोटो
समा, महिला एवं स्वास्थ्य
सन्दर्भ समूह

रेखांकन
प्रशांत ए.वी.

पेज सज्जा व मुद्रण
सिस्टम्स विज़न
दूरभाष 26811195
ई-मेल systemsvision@gmail.com

जागोरी JAGORI

बी 114 शिवालिक, मालवीय नगर
नई दिल्ली 110017
ई-मेल jagori@jagori.org
वेबसाइट www.jagori.org
दूरभाष 26691219, 26691220
हेल्पलाइन 26692700

इस अंक में

हमारी बात 1

लेख
- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) — दीपा — 3
- काम व महिलाओं की स्वास्थ्य सुरक्षा — आंचल कपूर — 20
- स्वावलंबी स्वास्थ्य से अधिकारों तक पहुंच — सबला व क्रान्ति — 27
- लोक स्वास्थ्य परम्परा — सुशीला डी. सिंह — 39

आमने-सामने
- खोखले वादे, खाली उम्मीदें — अभिजीत दास — 6
- सुई गर्भनिरोधकों का विरोध, आखिर क्यों? — 8
- काहिरा के एक दशक बाद — सुमति नायर, प्रीति किरबत व सारा सेक्सटन — 12

कहानी
- अपनी-अपनी खुशबू — विजयदान देथा — 16

कविता
- पुरुष — पवन करण — 18

संवाद
- प्रजनन तकनीकें: सहायक या नियंत्रक? — जुही जैन — 23
- स्वस्थ तन, स्वस्थ मन, स्वस्थ हम — जुही जैन — 32

अभियान
- स्वास्थ्य मंत्री के नाम — 10
- राष्ट्रीय परिषद घोषणा पत्र — 14
- हिंसा व स्वास्थ्य: जागोरी की पहल — मधु — 30

पुस्तक समीक्षा
- ऑर बॉडीज़, ऑरसेल्व्ज़ — 35

फ़िल्म समीक्षा
- प्रसव और प्रसूति — जेनिट चावला — 37

नया प्रकाशन
- स्वैप्ट ऑफ़ द मैप: सर्वाइविंग एविक्शन एण्ड रीसेटलमेंट इन डेल्ही
- सेक्सुअल हैरेसमेंट: टिप्स फॉर यंग अडल्ट्स

हमारी बात

'महिला स्वास्थ्य' को समर्पित हम सबला का यह अंक आपके हाथों में सौंपते हुए हमें काफ़ी खुशी हो रही है। इस खुशी का कारण यह है कि इतने सालों में पहली बार हम महिला स्वास्थ्य के विषय पर जानकारी आपके साथ बांट रहे हैं। इस विषय का विशाल दायरा मद्देनज़र रखते हुए इस थीम पर हम सबला के दो अंक निकालने का निर्णय लिया गया है।

बढ़ती हुई मंहगाई और विशेष रूप से अनाज के दामों में आई वृद्धि ने हम सबका जीना बहुत मुश्किल बना दिया है। दिन व दिन हालात बिगड़ते जा रहे हैं व सरकार राहत के लिए कोई कदम नहीं उठा रही है। समस्त विश्व की भूराज-नीति आज एक कठिन दौर से गुज़र रही है व गरीब और मेहनतकश लोग खासकर महिलाएं और बच्चियां इसका शिकार हो रहे हैं।

आमतौर पर महिला स्वास्थ्य यानी प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य, यही एक समीकरण सबके विचारों पर हावी है— फिर चाहे वह परिवार हो, समाज हो या हमारी सरकार, सबका ध्यान सिर्फ़ औरत की कोख पर है। चिन्ता अगर है तो सिर्फ़ इस बात की ये कोख कितने बच्चे पैदा करेगी! अपने पेट में बच्चा पालने वाली औरतें मेहनतकश हैं, वह रोजी रोटी कमाकर परिवार चलाती हैं; महिला प्रधान परिवारों की संख्या हर दिन बढ़ती जा रही है, कोख के सिवाय औरत के कुछ अंग हैं; वह एक समझदार इन्सान है ना कि सिर्फ़ बच्चा पैदा करने वाली मशीन, इन तमाम बातों को नज़रअंदाज़ किया जाता है।

पितृसत्ता, पूंजीवाद, सामंतशाही और जाति प्रथा से ग्रस्त हमारे समाज में औरतों का दर्जा पुरुषों से कम माना गया है। बचपन से ही खाना कम मिलना, बीमार होने पर स्वास्थ्य सेवाओं के लिए पैसा खर्च करने में परिवार का संकोच, अन्याय, दमन व काम का बोझ, हिंसा व यौन शोषण के अनुभव समाज में असमानता के ढांचे को बरकरार रखते हैं। इसके साथ-साथ उत्पादक श्रम, प्रजनन व घरेलू काम का तिगुण बोझ भी औरतों की सेहत व खुशहाली पर विपरीत असर डालते हैं।

उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण के दौर में हमारी ज़िन्दगी पर कुछ नए आक्रमण हुए हैं। एक तरफ आमदनी के मौके घट रहे हैं; कॉन्ट्रेक्ट लेबर के ज़माने में बहुत कम वेतन पर काम करने की सख्ती बरती जा रही है। दूसरी तरफ बढ़ती हुई मंहगाई, कमज़ोर राशन सुविधा, सरकारी व निजी स्वास्थ्य सेवा के भारी खर्चों की कीमत औरतें चुका रही हैं जिससे उनकी स्वास्थ्य सुरक्षा नगण्य होती जा रही है।

इसी नज़रिये से हमने इस अंक में महिला स्वास्थ्य के अलग-अलग पहलू आपके सामने रखने की कोशिश की है। सरकारी योजनाओं का ज़ोर माता और प्रजनन स्वास्थ्य पर होता है। लेकिन क्या

सरकार सचमुच इन मुद्दों पर काम कर रही है? राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत समुदाय के स्तर पर सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं की मॉनिटरिंग करने का मौका आम जनता को मिल रहा है। क्या इसका औरतों के स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से हम कोई लाभ उठा सकते हैं? इन सवालों पर काम करने वाले हमारे साथियों ने खास इस विषय पर लिखा है। काम के बोझ, तनाव तथा घर-बाहर की ज़िम्मेदारियों से लगातार जूझती औरत को खुद अपने शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को भी अहमियत देने की ज़रूरत है, इस पहलू पर भी विचार किया गया है। नारीवादी संगठनों ने महिला स्वास्थ्य के बारे में हमेशा सवाल उठाये हैं। समा, जागोरी व अन्य संगठनों के संयुक्त प्रयासों से स्वास्थ्य तंत्र व सरकार से जवाबदेही मांगने के हमारे अभियानों की चर्चा भी इस अंक में की गई है। अपने शरीर तथा अपने स्वास्थ्य के बारे में अपनी समझ को तराशकर हम किस तरह स्वावलंबन और सशक्तता की ओर बढ़ सकते हैं इसके अनुभवों को भी हमारी साथिनों ने बांटा है। इसके साथ-साथ चिकित्सा, विज्ञान और व्यवसायिक स्वास्थ्य तंत्र के दौर में पारम्परिक ज्ञान, प्राकृतिक प्रसव व जड़ी-बूटी इलाज की अहमियत पर भी चर्चा की गई है। एआरटी जैसे विषयों पर नारीवादी दृष्टिकोण से बहुत ज़्यादा लिखा नहीं गया है। इस विषय पर भी कुछ प्रश्न हमने संवाद के लिए उठाए हैं।

हालात मुश्किल हैं फिर भी हम सब अपने-अपने क्षेत्र में जूझ रहें हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी सरकार के साथ संघर्ष जारी है। आदिवासी, मज़दूर और गरीबों के हक़ों और उनके स्वास्थ्य के मुद्दों पर पच्चीस साल से भी ज़्यादा समय से काम करने वाले हमारे साथी, डॉ. बिनायक सेन आज भी छत्तीसगढ़ की जेल में हैं। लोगों के हक़ों के लिए लड़ने वाले साथी ललित मेहता की हत्या हो गई है। रोज़गार योजना में चलने वाले भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करने के जुर्म की कीमत ललित मेहता को अपनी जान से चुकानी पड़ी। सरकार पूरी तरह से किसके पक्ष में है यह हमें साफ़ दिख रहा है। लेकिन हमारा इरादा अटल है।

मध्य प्रदेश में माधुरी बेन और उनके साथियों ने एक जनआंदोलन के माध्यम से बड़वानी क्षेत्र के सरकारी स्वास्थ्य ढांचे के लिए चुनौती खड़ी कर दी है। आखिरकार स्वास्थ्य अधिकारियों को जवाबदेही रुख अपनाना ही पड़ा। लड़ाई छोटे क्षेत्र में थी, लेकिन छोटी लड़ाई भी हमारा जोश बढ़ाती है। एचआईवी बाधित लोगों के हक़ों पर काम करने वाले हमारे साथी एडवोकेट आनंद ग्रोवर को संयुक्त राष्ट्र के 'स्पेशल रैपोर्टियर ऑन हेल्थ' के रूप में नियुक्त किया गया है। देश भर के सभी स्वास्थ्य आंदोलनों के लिए यह एक बड़ी उम्मीद की किरण है।

आने वाले अंक में भी महिला स्वास्थ्य के अन्य कई पहलूओं का मंथन होगा। हमारी पूरी कोशिश है कि महिला स्वास्थ्य पर एक सम्पूर्ण समझ हम सब बना पाएं।

जया वेलणकर

लेख

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) में औरतों के सरोकार

दीपा

पृष्ठभूमि

पिछले दो दशकों में भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र के चरित्र में दो मुख्य बातें उभर कर आई हैं- पहली, सार्वजनिक और ज़रूरी स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति सरकार की बेरुखी, दूसरा सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्थिर या कम होता निवेश। आंकड़े दर्शाते हैं कि सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यय जो सन् 1990 में, सकल घरेलू उत्पाद का 1.3 प्रतिशत था 1999 में गिरकर मात्र 0.9 प्रतिशत रह गया है।

नब्बे के दशक से भूगोलीकरण, उदारीकरण व निजीकरण के फलस्वरूप विभिन्न सामाजिक क्षेत्र की सेवाओं का नियमित रूप से पतन हुआ है। विश्व संस्थानों के अनुदान द्वारा स्वास्थ्य सुधार कार्यक्रम नब्बे के दशक की शुरूआत में चालू किए गए थे। और आज भी कई राज्य सरकारें इसके कार्यान्वयन से जुड़ी हैं। इन सुधारों के तहत सार्वजनिक-निजी पार्टनरशिप, सेवा शुल्क आदि शामिल किए गए थे। पर इस सबके बावजूद कुछ सीमित स्वास्थ्य कार्यक्रमों और हस्तक्षेप को छोड़कर, सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र में कोई भी व्यापक स्वास्थ्य सेवा लागू नहीं की गई है। इससे औरतों, बच्चों और गरीबों के स्वास्थ्य स्तर पर काफ़ी नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र में स्वास्थ्य व परिवार कल्याण कार्यक्रम पर भी अत्याधिक ज़ोर दिया गया है। इनमें स्वास्थ्य निर्धारकों तक पहुंच के कारकों को सशक्त बनाने व एक सम्पूर्ण स्वास्थ्य सुविधा प्रणाली की ज़रूरत को भी नज़रअंदाज़ किया गया है। एक ओर जहां सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र लोगों की स्वास्थ्य ज़रूरतों को संबोधित करने में नाकामयाब रहा है वहीं दूसरी ओर प्राईवेट चिकित्सीय क्षेत्र के अनियंत्रित फैलाव ने गरीबों की हालत बद से बदतर कर दी है। अनुमानित है कि लगभग 40 प्रतिशत गरीब अस्पताल और इलाज का खर्चा पूरा करने के लिए ऋण लेने और अपनी सम्पत्ति बेचने के लिए बाध्य हो जाते हैं। इसके अलावा 25 प्रतिशत भारतीय गरीब अस्पताल के खर्च के कारण गरीबी रेखा के नीचे जीते हैं।

एनआरएचएम

यू पी ए सरकार का यह कार्यक्रम अप्रैल 2005 में शुरू किया गया था। यह कार्यक्रम दशकों से सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र में निहित समस्याओं को स्वीकारते हुए विकास और लोगों के बेहतर जीवन के लिए स्वास्थ्य के महत्व को पुनः दोहराता है। इसी दिशा में एनआरएचएम का लक्ष्य है उच्चस्तरीय स्वास्थ्य सेवा तक गरीबों, औरतों व बच्चों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की पहुंच बढ़ाना। यह कार्यक्रम 18 प्रदेशों, जहां सार्वजनिक स्वास्थ्य मानकों में गिरावट पाई गई है, में स्वास्थ्य तंत्र व लोगों के स्वास्थ्य स्तर को बेहतर बनाने के लिए प्रयासरत है। एनआरएचएम के मुख्य लक्ष्य हैं:

- बाल मृत्यु-दर व मातृत्व मृत्यु-दर में कमी;
- सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं जिनमें महिला व बच्चों का स्वास्थ्य, पानी, सफाई, टीकाकरण व पोषण शामिल है, तक लोगों की व्यापक पहुंच;
- संक्रामक व गैर संक्रामक बीमारियों जिनमें स्थानीय रोग भी शामिल हों, से बचाव व रोकथाम;
- जनसंख्या स्थायीकरण, जेंडर व जनसांख्यिकीय संतुलन;
- मुख्यधारा में आयुष पद्धति व स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं को समाहित करना।

कुछ नई शुरूआतें

इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए एनआरएचएम के प्रयासों में मुख्य हैं — स्वास्थ्य पर सार्वजनिक व्यय में 2-3 प्रतिशत बढ़ोत्तरी, मूल स्वास्थ्य सेवा तंत्र की पुनर्रचना, भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य स्टैन्डर्ड के अनुसार स्वास्थ्य सुविधाओं की बेहतरी, स्वास्थ्य ढांचों में क्षेत्रीय असंतुलन को कम करना, योजना व मॉनिटरिंग प्रक्रियाओं व तंत्रों का विकेन्द्रीकरण जिनमें स्थानीय व सामुदायिक अभिशासन, नियंत्रण भागीदारी, व जवाबदेही शामिल हो, इत्यादि।

परन्तु एनआरएचएम के तहत प्रस्तावित परिवर्तनों में ग्रामीण क्षेत्रों में प्राइमरी स्वास्थ्य सेवा को सशक्त बनाने की सीमित संभावनाएं नज़र आती हैं। केवल इन्हीं प्रयासों से सम्पूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं के उद्देश्य को पूरा करना कठिन लगता है। इसके अलावा इस कार्यक्रम की धारणा, सोच और रणनीतियों के प्रस्ताव और कार्यान्वयन में भी गंभीर समस्याएं दिखाई पड़ती हैं।

महिला स्वास्थ्य के सन्दर्भ में ऐसी ही कुछ धारणाओं, नज़रियों और रणनीतियों की समीक्षा नीचे की गई है जिन पर गौर करने की व जहां ज़रूरत पड़े विरोध जताने की आवश्यकता है।

एनआरएचएम प्रजनन व शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम-द्वितीय चरण

एनआरएचएम एक राष्ट्रीय परियोजना है पर इसके तहत प्रजनन व शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम ही एक इकलौता कार्यक्रम है जिस पर अधिकांश पूंजी खर्च की जा रही है। हालांकि प्रजनन व शिशु स्वास्थ्य सम्पूर्ण स्वास्थ्य सेवा का महत्वपूर्ण हिस्सा है फिर भी स्वास्थ्य के अन्य पहलुओं को दरकिनार करना उचित नहीं है। प्रजनन व शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम के दूसरे चरण का प्रारूप और फंडिंग अंतर्राष्ट्रीय डोनर संस्थाओं द्वारा निर्धारित किया गया है। लिहाज़ा स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ केवल गर्भवती महिलाओं, टीकाकरण, परिवार नियोजन सेवाओं तक सीमित होकर रह गया है। यानि एनआरएचएम पर बाहरी डोनर संस्थाओं के प्रभाव और फंडिंग का नियंत्रण है।

एनआरएचएम व महिला स्वास्थ्य

इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य है — सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा जिसमें महिला स्वास्थ्य व प्राईमरी स्वास्थ्य सेवा शामिल है, सबको समान रूप से मुहैय्या कराना। इस लक्ष्य में यह सोच निहित है कि औरतों का अच्छा स्वास्थ्य केवल उनके प्रजनन से संबंधित है। प्रजनन, शिशु कल्याण आदि के अलावा और कई स्वास्थ्य समस्याएं हैं। जिनसे औरतों का सरोकार है। इस लिहाज़ से यह कार्यक्रम महिला स्वास्थ्य का एक बेहद सीमित नज़रिया लेकर चलता है।

एनआरएचएम व दो-शिशु प्रतिमान

इस कार्यक्रम के तहत परिवार नियोजन और जनसंख्या स्थायीकरण पर ज़ोर दिया जा रहा है। एनआरएचएम के कार्यक्रमों में दो बच्चों पर ज़ोर देने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले तरीकों पर गंभीरता से सोचा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए *जननी सुरक्षा योजना* के तहत पहले दो बच्चों की संस्थागत स्तरीय जचगी होने पर महिला को नकद धनराशि सहयोग दिया जाता है। तीसरा बच्चा होने पर सहयोग पाने की शर्त है बंधीकरण की रज़ामंदी व चौथे बच्चे पर कोई सुविधा प्रदान नहीं की जाती। इसके अलावा स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता का मुआवज़ा भी इस बात पर निर्भर है कि वह कितने 'केस' सेंटर तक लाती है।

फोटो: न्यू कॉन्सेप्ट

संस्थागत स्तरीय प्रसव का विस्तार

एनआरएचएम की *जननी सुरक्षा योजना* संस्थागत स्तरीय प्रसव पर आर्थिक सहयोग मुहैय्या कराती है। यह कार्यक्रम इस धारणा पर आधारित है कि घर पर होने वाले प्रसव असुरक्षित होते हैं तथा अस्पताल में जच्चा-बच्चा की सुरक्षा की गारंटी अधिक होती है। जबकि हम सभी जानते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में संस्थागत स्वास्थ्य सेवाएं नगण्य या फिर बिल्कुल निम्न स्तर की हैं।

फोटो: न्यू कॉन्सेप्ट

एनआरएचएम व निजीकरण

इस कार्यक्रम के तहत निजी क्षेत्र के नियंत्रण पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। सार्वजनिक स्वास्थ्य लक्ष्यों को पाने के लिए सार्वजनिक-निजी भागीदारी की जा रही है। रोगी कल्याण समितियों या स्वायत्त सोसाइटियों का गठन, अस्पतालों के निजी प्रबंधन, आदि के कारण स्वास्थ्य सुविधाओं पर 'खर्च' बढ़ जाता है जो गरीबों के लिए परेशानियां खड़ी करता है। पैसे के अभाव में वे आम मूल सेवाओं से वंचित हो जाते हैं। इसके अलावा इन सार्वजनिक-निजी भागीदारी पैमानों के तहत गरीबों की सेवाओं तक पहुंच, सुविधाओं की क्वालिटी व जवाबदेही स्तर पर नियंत्रण के मापदण्डों का अभाव है।

'आशा' स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता

एनएचआरएम में औरतों को स्वास्थ्य सेवाएं 'आशा' स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता के माध्यम से घरेलू स्तर पर प्रदान करने के प्रयास किए गए हैं। यह कार्यकर्त्ता आठवीं पास महिला है जो एक स्वयंसेविका के रूप में काम करती है। जहां एक ओर शिक्षा का यह निम्न स्तर औरतों के लिए फायदेमंद हैं वही दूसरी ओर यह उन तमाम महिलाओं को स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता बनने से वंचित करता है जिनका शैक्षिक स्तर कम है या जो बिल्कुल अनपढ़ हैं, चाहे फिर उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता कितनी भी मज़बूत क्यों न हो। इसके अलावा 'आशा' कार्यकर्त्ता को कोई बंधा वेतन नहीं दिया जाता, उसका अधिकतम मुआवज़ा हज़ार रुपए सालाना है। इसके साथ-साथ उसके कुछ विशिष्ट योगदान के लिए कुछ मुआवज़ा दिया जाता है। हालांकि 'आशा' कार्यकर्त्ता का काम स्वास्थ्य सेवाएं मुहैय्या कराना है पर ज़्यादातर समय उसका रोल प्रजनन संबंधी सुविधाएं दिलवाने तक ही सीमित रहता है। वह स्वास्थ्य केन्द्र में सहयोगी की भूमिका निभाती हैं। केन्द्र में मौजूद 'ऑग्ज़ीलरी नर्स मिडवाइफ़' (एएनएम) व अन्य स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता समुदाय के प्रति जवाबदेय या वचनबद्ध नहीं हैं। साथ ही स्वास्थ्य तंत्र में स्तरीय सेवा-सुविधाओं के अभाव में 'आशा' कार्यकर्त्ता का काम बेहद मुश्किल हो जाता है।

योजना व जवाबदेही तंत्र व प्रक्रियाएं

एनआरएचएम के मॉनिटरिंग और मूल्यांकन के तरीकों में हर स्तर की प्रक्रियाओं को शामिल किया जाना चाहिए। इनमें समुदाय के प्रतिनिधि खासकर औरतों व हाशिएदार वर्ग के सदस्य शामिल किए जाने चाहिए। यह कदम मौजूदा सत्ता ढांचों के शिकंजों से इन तंत्रों और प्रक्रियाओं को आज़ाद करके, समुदाय और महिलाओं के प्रति इसकी जवाबदेही स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण होगा। जब औरतें और ग्रामीण गरीब इस कार्यक्रम का अभिन्न अंग बनेंगे तभी स्वास्थ्य ज़रूरतों को सही मायने में सम्बोधित किया जा सकेगा। एनआरएचएम में इन तमाम योजनाओं के अलावा स्वास्थ्य के दूसरे पैमाने जैसे पोषण, स्वच्छता, पानी आदि को भी सतत रूप से शामिल किया जाना चाहिए। तभी औरतों के स्वास्थ्य सरोकार संबोधित होने की संभावना बनेगी।

खोखले वादे, खाली उम्मीदें

अभिजीत दास
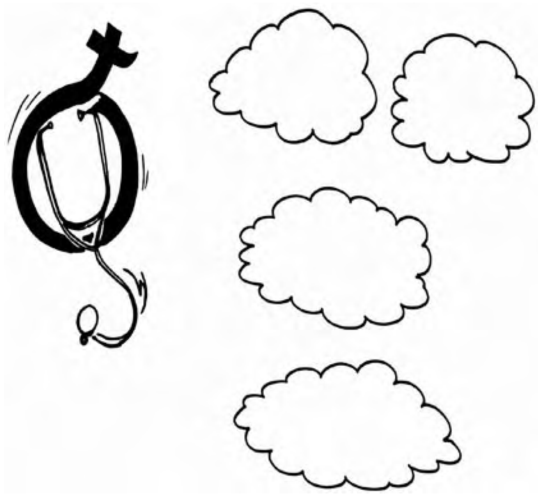
उनसठवें गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या को किंग जॉर्ज मेडिकल विश्वविद्यालय के डॉक्टरों ने सलेन्टा को सर्जरी के लिए दाखिल किया। सलेन्टा और उसके पति के लिए यह एक लम्बी और कठिन यात्रा का अंत था। उनका यह सफ़र 17 मार्च 2007 को शुरू हुआ था जब पुरकाज़ी के हैल्थ सेंटर (ज़िला मुज़फ्फ़र नगर, उत्तर प्रदेश) में सलेन्टा ने अपने छठे बच्चे को जन्म दिया था। इस दलित, चमार जाति के परिवार के लिए यह उनकी तकलीफ़ों की शुरूआत थी। बच्चे के जन्म के बाद अस्पताल से नर्सिंग होम, मेडिकल कॉलेज, प्रमुख स्वास्थ्य अधिकारी, एमएलए और स्वास्थ्य सेक्रेटरी के दफ्तर, के न जाने कितने चक्कर काटे होंगे तब कहीं जाकर उनके केस की सुनवाई हुई।

सलेन्टा को प्रसव के बाद वेसिको-वजाइनल फिसटयूला यानि मूत्राशय नली में नासूर हो गया था। इस बीमारी के कारण उसके मूत्राशय और प्रसव नली के बीच में एक जगह बन गई थी जिससे हर समय पेशाब टपकता रहता था। इस संक्रमण का कारण था स्वास्थ्य केंद्र में प्रसव के दौरान नर्स-मिडवाईफ़ की लापरवाही। अपना इलाज कराने के चक्कर में परिवार कर्ज़ के बोझ तले दब रहा था। पर सलेन्टा के दाखिले के पीछे संवेदनशील स्वास्थ्य अधिकारी नहीं बल्कि सामाजिक कार्यकत्ताओं के सतत प्रयास थे।

सलेन्टा भाग्यशाली है कि वह अभी तक मरी नहीं। हो सकता है कि उसकी तकलीफ़ का अब मुफ्त इलाज भी हो जाए। अगर ऐसा नहीं होता तो उसकी ज़िन्दगी मौत से भी बदतर हो जाएगी। अधिकांश गरीब दलित महिलाओं का यही हश्र होता है।

पर सलेन्टा की तरह उत्तर प्रदेश के कुशीनगर की दलित महिला सुमित्रा की किस्मत अच्छी नहीं थी। सुमित्रा ने भी प्रसव के बाद सुखरौली के स्वास्थ्य केंद्र में अपना इलाज कराया था। टेलिविज़न पर सरकारी विज्ञापनों, सड़क पर लगे साइनबोर्ड और स्थानीय एएनएम की सलाह मानकर सुमित्रा प्रसव के लिए सुखरौली पहुंची। 15 दिसम्बर, शाम चार बजे वह रिक्शा से स्वास्थ्य केंद्र पहुंची जहां कोई डॉक्टर मौजूद नहीं था। केंद्र की एएनएम ने उसके साथ बेहद असंवेदनशील व्यवहार किया। गाली गलौज, चाटों के साथ-साथ उसे कई इंजेक्शन भी लगा दिए। आठ बजे जब सुमित्रा की हालत खराब हो गई तब एएनएम ने उसके परिवार को उसे घर वापस ले जाने को कहा। सुमित्रा की मौत हो गई। स्थानीय स्वास्थ्य केंद्र में इसका कोई ब्योरा नहीं था क्योंकि उसे लिखा-पढ़ी करके दाखिल नहीं किया गया था।

उत्तरप्रदेश, झारखंड व बिहार की यह रोज़मर्रा की घटनाएं हैं। दोनों घटनाओं में महत्वपूर्ण बात यह है कि औरतों ने स्वास्थ्य तंत्र द्वारा प्रसारित आदेशों का पालन किया था, पर स्वास्थ्य तंत्र उन्हें वाजिब सुविधाएं और

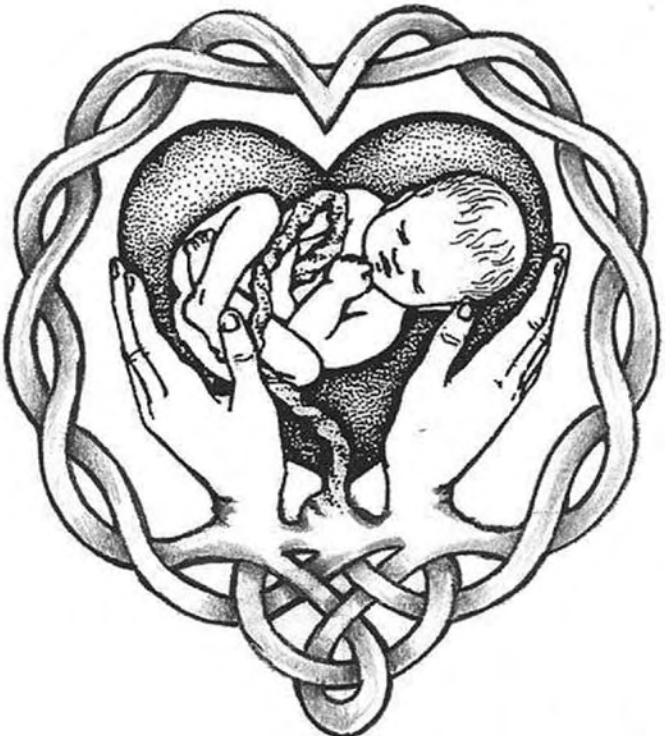

इलाज प्रदान करने में असमर्थ रहा। आज हम गरीबों के *एनआरएचएम, सुनिश्चित सेवा गारंटी* और *जननी सुरक्षा योजना* जैसी स्कीमों के प्रति राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के वादों के बीच खड़े हैं। यू पी ए सरकार का *एनआरएचएम* हर साल अपने स्वास्थ्य अनुदान में बढ़ोत्तरी कर रहा था। *सुनिश्चित सेवा गारंटी* के तहत गरीबों को दी जाने वाली स्वास्थ्य सुविधा सेवाओं की क्वालिटी के मापदण्डों का ब्योरा है। उसी तरह *जननी सुरक्षा योजना* जो गणतंत्र दिवस पर स्वास्थ्य मंत्रालय की प्रमुख पेशकश थी, के तहत करोड़ों रुपयों के प्रस्ताव हैं जिनसे अस्पताल और स्वास्थ्य केंद्रों में प्रसव के लिए आने वाले गरीबों को सहायता प्रदान की जाएगी। इन संस्थागत स्तरीय प्रसूतियों का लम्बे दौर का लक्ष्य है जच्चा-बच्चा सुरक्षा और मातृत्व मृत्यु-दर में कमी।

पर सुमित्रा और सलेन्टा के केस में इन सब योजनाओं की मौजूदगी से कोई फायदा नहीं हुआ। इसमें हैरानी की कोई बात नहीं है कि दोनों औरतें दलित हैं। ऐसी न जाने कितनी सुमित्राएं स्वास्थ्य केंद्रों और अस्पतालों के चक्कर लगातीं हैं जहां उन्हें तिरस्कार, बेरुखी और अक्सर ज़िंदगी को खतरे में डालने वाला इलाज मिलता है। और अगर यह औरतें इलाज के दौरान मर जाती हैं तो उनके अस्पताल आने के सबूत गैर मौजूद ही रहते हैं। सलेन्टा जैसी महिलाओं के लिए इस देश के वादे खोखले ही रहते हैं क्योंकि इन वादों को कार्यांवित करने वाली कोई शक्ति यहां मौजूद नहीं है।

अब समय आ गया है कि हम खोखले, बेमानी वादों के माध्यम से गरीब और हाशिए पर खड़े लोगों की ज़िंदगी से खेलना बंद करें। हमारे नीति निर्माताओं को यह समझना होगा कि महज कार्यप्रणाली या नियम बना देने का अर्थ यह नहीं होता कि उसका पालन हो जाएगा। उन्हें इस सच्चाई को स्वीकारना होगा कि स्वास्थ्य सुविधा दाताओं और सुविधाएं पाने वाली गरीब महिलाओं के बीच वर्ग और सामाजिक भेदभाव की ऊंची दीवारें हैं। इतिहास गवाह है कि इन फ़र्क़ों के कारण शोषण, भेदभाव, घटिया सेवाएं, आर्थिक लूटपाट व प्रताड़ना भरा व्यवहार झेलना गरीबों के लिए एक आम बात है। मातृक स्वास्थ्य सहस्राब्दि के विकास लक्ष्य का एक महत्वपूर्ण मानक है, पर जहां धन के आवंटन में बढ़ोत्तरी हुई है वहीं हमारे देश की दलित औरतों के लिए हालात जस के तस हैं। नई स्कीमों के आने से इस सच्चाई में कोई फ़र्क़ नहीं आएगा जब तक स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैय्या कराने वालों के लिए दण्ड और सज़ा व भुक्तभोगी के लिए मुआवज़े के प्रावधान नहीं बनाए जाएंगे।

हमारा देश अब गरीब नहीं है और हम विश्व के स्तर पर अपनी जगह सुनिश्चित करने में लगे हैं। पर जहां तक गरीबों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं का सवाल है हमें अपने आर्थिक आंवटनों को *राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन* में सुनिश्चित सेवा गारंटी के साथ-साथ जवाबदेही सेवा, परोक्ष नतीजों के लिए मुआवज़े और निश्चित रेफरेल सेवा के साथ जोड़कर इस्तेमाल करना होगा। और जब तक हम औरतों के लिए बेहतरीन सुविधाओं और सेवाओं की गारंटी न ले पाएं तब तक संस्थागत प्रसव के लिए ज़ोर नहीं दिया जाना चाहिए। मुझे यकीन है कि हम नहीं चाहेंगे कि हमारी अपनी बहनों के साथ वह हो जो सलेन्टा और सुमित्रा के साथ हुआ। तो फिर उन गरीब दरकिनार हज़ारों औरतों का यह हश्र हो ऐसा हम क्यों चाहेंगे?

सुई गर्भनिरोधकों का विरोध, आखिर क्यों?

स्वास्थ्य मंत्री ने हाल ही में घोषणा की है कि देश के कुछ मेडिकल कॉलेजों में नेट एन व साइक्लोफेम नाम के गर्भ निरोधक टीकों के चौथे चरण के परीक्षण किए जाएंगे। महिला संगठन एवं स्वास्थ्य-कार्यकर्ता इस फैसले के विरोध में हैं। आइए समझने की कोशिश करें कि महिला संगठन व स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं के विरोध का कारण क्या हैं?

- ये टीके हार्मोनयुक्त हैं और इनका महिलाओं के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ेगा। अनियमित माहवारी, खून में गुठलियां पैदा होना, मानसिक उदासीनता, लम्बे अर्से तक लेने से कैंसर का खतरा, हड्डियों की घनता कम होना, फ्रैक्चर होने का खतरा बढ़ना आदि इसके आज़माये गए परिणाम हैं। यह कहा गया है कि ये गर्भ निरोधक दो गर्भधारणाओं के बीच का समय बढ़ाने के लिए उपयुक्त होगा, लेकिन यह नहीं बताया जाता है कि इससे बांझ होने का खतरा भी है।
- ये टीके लगाने से पहले इस बात की जांच करना ज़रूरी है कि उस महिला को दिल की बीमारी, खून जमने की विकृति, पित्ताशय की कमज़ोरी, गर्भावस्था की शुरूआत, मधुमेह, योनि का कैंसर आदि में से कोई तकलीफ़ तो नहीं है। लेकिन यह जांचने के लिए अति आधुनिक मशीनें और महिला की तमाम पूर्व व्याधियों का इतिहास जानना ज़रूरी होता है। एक बार टीका लगाने के बाद उस महिला के स्वास्थ्य की लगातार देखरेख करना भी आवश्यक है। हमारे देश की अपर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं, स्वास्थ्य पर होने वाला कुल सरकारी खर्चा और ढांचागत समायोजन की नीतियों की वजह से चरमरा गई स्वास्थ्य व्यवस्था को देखते हुए यहां इन गर्भनिरोधकों का इस्तेमाल सुरक्षित तरीक़े से नहीं होगा।
- जहां फंड के अभाव में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं ठप हो रही हैं वहीं बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों का मुनाफ़ा बढ़ाने

के लिए नेट एन व साइक्लोफेम जैसे महंगे गर्भ निरोधकों पर सरकार पैसा लगा रही है। अगर सरकार सचमुच जनसंख्या को नियंत्रित करना चाहती है तो उसे पहले नवजात शिशु और बाल मृत्यु की दर कम करने के लिए उपयुक्त कदम उठाने होंगे।

- ज़ोर ज़बरदस्ती से जनसंख्या कम करने की पुरानी प्रवृत्ति को देखते हुए सुई गर्भ निरोधकों का दुरुपयोग होने की भारी संभावना है। भारतीय चिकित्सा व्यवस्था में मरीज़ की सहमति लेने की परंपरा नहीं है। लक्ष्य-आधारित जनसंख्या नीति के चलते और जन्म-दर कम करने की ज़ल्दबाजी में महिला की ज़रूरतों पर कोई ध्यान नहीं देता है।
- राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, परिवार नियोजन के कार्यक्रमों में 'सूचना आधारित चयन की आज़ादी' एवं 'लक्ष्यमुक्त नज़रिया' अपनाने के लिए बाध्य हैं। लेकिन अनुभव बताते हैं कि राज्य सरकारें इस नज़रिए का खुलेआम उल्लंघन कर रही हैं।
- दो से अधिक बच्चे पैदा करने वाले दम्पतियों को सज़ा के तहत सुझाए गए कदम इस प्रकार हैंः राशन कार्ड रद्द करना, सरकारी स्कूलों में बच्चों को भर्ती से रोकना। अनुसूचित जाति/जनजाति समुदाय की कल्याणकारी योजनाओं को रोकना आदि। ये सुझाव गरीबों और महिलाओं के ख़िलाफ़ हैं।

साभारः समा

- सिर्फ़ दो बच्चों का पैमाना लागू करने से दलित और आदिवासी समुदाय के अधिकतर लोग स्थानीय चुनाव नहीं लड़ पाएंगे। इस प्रकार उनका जनतांत्रिक अधिकार छिन जाएगा।
- जहां सुरक्षित गर्भनिरोधकों की इतनी बड़ी मांग है वहां सज़ा देने की बात करना तर्कसंगत नहीं है।
- सरकार के ये प्रस्ताव भारत के संविधान के दिशा निर्देशक तत्वों का और कई अंतर्राष्ट्रीय समझौतों का, जिन पर भारत सरकार के हस्ताक्षर हैं, उल्लंघन करते हैं। बीजिंग प्लेटफॉर्म फ़ॉर एक्शन और काहिरा सम्मेलन की घोषणा के भी यह विपरीत हैं।
- दो बच्चों का पैमाना लागू करने से कन्या भ्रूणहत्या के मामले बढ़ने का खतरा है। हमारे देश में स्त्री-पुरुष अनुपात वैसे भी खतरनाक बिन्दु तक पहुंच गया है।

हमारी मांग है किः

- टीकों पर होने वाला फ़िज़ूल खर्चा बचाकर प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर लगाया जाए।
- उन सुरक्षित निरोधकों को प्रसारित किया जाए जिनका नियंत्रण इस्तेमाल करने वालों के हाथ में होगा। इसी से 'चयन की आज़ादी' भी प्रमाणित होगी।
- इससे पहले किए गए सुई गर्भ निरोधकों के इस्तेमाल की आंकड़ों सहित तमाम जानकारियां एवं उसकी बिक्री के बाद किए गए सर्वेक्षण का ब्योरा पूरी पारदर्शिता के साथ उपलब्ध कराया जाए।
- राज्य सरकारों की उन तमाम घोषणाओं को तुरन्त वापस लिया जाए जिनमें सज़ा की बात की गई है।

विश्व स्वास्थ्य दिवस पर हम दोहराते हैं कि 'जनसंख्या विस्फोट' को हौवा मत बनाइए। देश के ज़्यादातर राज्यों में जन्म-दर घट रही है। परिवार नियोजन कार्यक्रम में 'प्रोत्साहन' और 'सज़ा' दोनों की ज़रूरत नहीं है। आवश्यक है कि सामाजिक न्याय पर आधारित समान विकास और सब के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य की गारंटी!

खतरनाक गर्भनिरोधक टीके का निरोध करो!
जुल्मी जनसंख्या नीति का विरोध करो!

साभारः समा, महिला एवं स्वास्थ्य सन्दर्भ समूह

स्वास्थ्य मंत्री के नाम

दिनांकः 29/04/08

डॉ. ए. रामादॉस
केन्द्रीय मंत्री-स्वास्थ्य व परिवार कल्याण विभाग
स्वास्थ्य व परिवार कल्याण मंत्रालय
निर्माण भवन, नई दिल्ली-110008

विषयः सार्वजनिक स्वास्थ्य संरचनाओं के माध्यम से नेट एन और साइक्लोफेम के चौथे चरण के परीक्षण का महिला संगठनों द्वारा विरोध

आदरणीय मंत्री महोदय,

हम, महिला समूह, स्वास्थ्य संगठन और नागरिक, सुई गर्भ निरोधक नेट एन और साइक्लोफेम के चौथे चरण के परीक्षण को लेकर बेहद चिंतित हैं, जिसे स्वास्थ्य व परिवार कल्याण मंत्रालय के निर्देशों के तहत सार्वजनिक स्वास्थ्य संरचनाओं द्वारा किए जाने का प्रस्ताव है।

नेट एन और साइक्लोफेम के चौथे चरण के परीक्षण का प्रस्ताव स्वास्थ्य व परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा 16 अप्रैल 2008 को दिल्ली में एक मीटिंग के दौरान पेश किया गया था। मीटिंग के सहभागियों को जानकारी दी गई कि आईसीएमआर तीसरे चरण के परीक्षण समाप्त कर चुका है। इसी आधार पर 'विशेषज्ञों' ने 31 ज़िला अस्पतालों/मेडिकल कॉलेजों और 9 गैर सरकारी संस्थाओं के माध्यम से चौथे चरण के परीक्षण के शुरू किए जाने के लिए मंज़ूरी दी है।

आप भली भांति वाकिफ़ हैं कि 1985, से देश के महिला संगठन और स्वास्थ्य समूहों द्वारा औरतों और उनके बच्चों की खराब सेहत के संदर्भ में, इन सुई गर्भ निरोधकों का, औरतों पर गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं और दुष्प्रभाव पैदा करने के कारण, निरन्तर विरोध किया गया है। यह अफ़सोसजनक है कि इस विरोध के बावजूद मंत्रालय ने भारतीय महिलाओं पर तीसरे चरण के परीक्षण जारी रखे।

अक्तूबर 2004 में, सार्वजनिक स्वास्थ्य संरचनाओं द्वारा सुई गर्भ निरोधकों के इस्तेमाल के प्रत्युत्तर में, 62 महिला संगठनों और नागरिकों ने एक विज्ञप्ति आपको पेश की थी, जिनमें सिलसिलेवार ब्योरा था कि सुई गर्भ निरोधक भारत के लिए सही क्यों नहीं हैं? साथ ही इसमें नेट एन और डेपो प्रोवेरा की सुरक्षा, छोटे और लम्बे दौर के विपरीत स्वास्थ्य प्रभाव और भीषण परोक्ष असर को लेकर हमारी चिंताओं का भी उल्लेख किया गया था। इसके बावजूद आपने नेट एन और साइक्लोफेम के चौथे चरण के परीक्षण शुरू करने के पहले, इन समूहों के प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श या इस दुष्परिणामों वाले संगीन मुद्दे पर आम बहस शुरू करने की आवश्यकता महसूस नहीं की।

डॉ. (श्रीमती) एम एस जयलक्ष्मी, डिप्टी कमीश्नर, के पत्र संख्या एन 14013/22/2000/TO दिनांक 19/4/05 के अनुसार:

"मैं आपको यह जानकारी देना चाहती हूं कि सुई गर्भ निरोधक देश में विक्रय इजाज़त के तहत, डॉक्टर के लिखित आदेश पर बाज़ार में सन् 1990 से उपलब्ध हैं। पर भारत सरकार का इसे राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में शामिल करने का कोई इरादा नहीं है, जब तक कि आईसीएमआर व एनआईआरआरएच, मुंबई द्वारा भारतीय महिलाओं के स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव की जांच-पड़ताल पूरी तरह समाप्त नहीं हो जाती। और इस परीक्षण के परिणाम औरतों के हित में नहीं पाए जाते। इस शोध के परिणामों को मद्देनज़र रखकर ही राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में इसको शामिल करने का निर्णय लिया जाएगा।"

हम जानना चाहते हैं कि नेट एन की सुरक्षा और स्वीकृति के कौन से नए सबूत सरकार के समक्ष हैं जिनके आधार पर मंत्रालय ने ऐसे असुरक्षित और खतरनाक गर्भ निरोधक के चौथे चरण के आगाज़ की अनुमति दी है?

हम याद दिलाना चाहते हैं कि जहां तक साइक्लोफेम का सवाल है, ड्रग्स (औषधि) तकनीकी सलाहकार बोर्ड की तकनीकी समिति के अनुसार डीएमपीए (यानी साइक्लोफेम में इस्तेमाल होने वाला प्रमुख तत्व) का परिवार नियोजन कार्यक्रम में बड़े पैमाने पर उपयोग पूर्ण रूप से अनुपयुक्त है।

लिहाज़ा हमारी मांग है कि बताया जाए कि किस वैज्ञानिक बिनाह पर इस सिफारिश की अवहेलना की जा रही है।

हम मांग करते हैं कि:

- सार्वजनिक स्वास्थ्य संरचनाओं के माध्यम से खतरनाक हारमोनयुक्त सुई गर्भ निरोधकों को लागू करने की नीति पर फौरन रोक लगाई जाए।
- नेट एन और साइक्लोफेम के तीसरे चरण के परीक्षणों से जुड़े सभी दस्तावेज और जानकारी, जिनमें स्टडी डिज़ाइन, मूलप्रतियां, उपलब्धियां, जानकारी युक्त रज़ामंदी फॉर्म की विषयवस्तु, विरोधात्मक परिस्थितियों की जांच, परीक्षण स्थलों की सूची तथा परीक्षण में शामिल महिलाओं को प्रदान की गई कानूनी और चिकित्सा सुरक्षा शामिल हो, को सार्वजनिक किया जाए। चौथे चरण के परीक्षण संबंधी सभी दस्तावेज़ जिनमें प्रयोग डिज़ाइन, मूलप्रतियां तथा ज़िला अस्पतालों/मेडिकल कॉलेजों व गैर सरकारी संगठनों की पूरी सूची शामिल हो, को भी सार्वजनिक बनाया जाए।
- हमारी गुज़ारिश है कि आप इस देश की तमाम महिलाओं के सार्वजनिक हितों को ध्यान में रखते हुए इन मुद्दों पर गौर करें। इस खत में जिन दस्तावेज़ों और जानकारी की मांग की गई है उन्हें भी एक सप्ताह के भीतर मुहैय्या कराया जाए।

दस्तावेज़ निम्न पते पर भेजें:
प्रीति नायक/बीनू रावत
c/o समा-महिला व स्वास्थ्य सन्दर्भ केन्द्र
बी 45 (दूसरी मंज़िल), शिवालिक मेन रोड
मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017

समर्थनकर्त्ताः

1. आलोचना-महिला शोध एवं दस्तावेज़ीकरण सेन्टर, पुणे
2. एक्शन इण्डिया, नई दिल्ली
3. अक्षरा, मुंबई
4. अखिल भारतीय डेमोक्रेटिक महिला संगठन
5. ब्रेस्ट फीडिंग प्रमोशन नेटवर्क ऑफ़ इण्डिया
6. सेहत, मुंबई
7. सेंटर फ़ॉर हेल्थ इक्वीटि, राजस्थान
8. सेंटर फ़ॉर विमेन्स डेवलपमेंट स्टडीज़, दिल्ली
9. क्रिया, दिल्ली
10. दीपा, जन स्वास्थ्य अभियान
11. डॉ. अजय खरे, भोपाल
12. डॉ. सी सत्यामाला, एमएफ़सी
13. डॉ. मोहन राव, सदस्य, पॉपुलेशन काउंसिल, दिल्ली
14. डॉ. नवशरण सिंह, दिल्ली
15. फोरम अगेंस्ट द ऑप्रेशन ऑफ़ विमेन, मुंबई
16. फ्रेंड्स, लखनऊ
17. इनिशियेटिव्स - विमेन इन डेवलपमेंट, तमिलनाडु
18. जागोरी, दिल्ली
19. सिसर्स - ज्वाइंट विमेंस प्रोग्राम
20. के के मीणा, झारखंड विमेंस नेटवर्क, रांची
21. लेबिया, मुंबई
22. मा, बिहार
23. मध्य प्रदेश जन स्वास्थ्य अभियान (एमपीजेएसए)
24. मासूम, पुणे
25. नेशनल अलायंस ऑफ़ विमेन, उड़ीसा
26. निरंतर, दिल्ली
27. नॉर्थ ईस्ट नेटवर्क
28. पल्लवी गुप्ता, दिल्ली
29. पाटनर्स फॉर लॉ इन डेवलपमेंट, दिल्ली
30. प्रयास, राजस्थान
31. राधा होला - सलाहकार, शोध व सम्प्रेषण, दिल्ली
32. राही फाउंडेशन, दिल्ली
33. रुकमणि सेन, नारी निर्जतन प्रतिरोध मंच, कोलकाता
34. संचेतना, कोलकाता
35. सहेली विमेंस रिसोर्स सेंटर, दिल्ली
36. सहियर (महिला संगठन), बड़ौदा
37. सखी केन्द्र, उत्तर प्रदेश
38. सखी, त्रिवेन्द्रम
39. समा, महिला व स्वास्थ्य सन्दर्भ समूह, दिल्ली
40. संकल्प, बिहार
41. संग्राम/वेम्प, महाराष्ट्र
42. साथी, पुणे
43. श्रमजीबी महिला समिति, पश्चिम बंगाल
44. सोभा मारिक, नारी निर्जतन प्रतिरोध मंच
45. सुचेतना घोष, नारी निर्जतन प्रतिरोध मंच कोलकाता
46. स्वयं, कोलकाता
47. तारशी, दिल्ली
48. वाचा, मुंबई
49. वनांगना, उत्तर प्रदेश
50. विकल्प (महिला संगठन), बड़ौदा
51. विमोचना, बंगलौर
52. विमेंस सेंटर, मुंबई
53. जुबान, दिल्ली

काहिरा के एक दशक बाद : मुक्त व्यापार अर्थव्यवस्था में औरतों का स्वास्थ्य

सुमति नायर, प्रीति किरबत व सारा सेक्सटन

संयुक्त राष्ट्र का *अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या व विकास अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन,* 1994 में काहिरा में हुआ था। यह सम्मेलन जनसंख्या व विकास के विमर्श में एक अग्रणी कदम माना जाता है। इस सम्मेलन से निकले एक्शन प्रोग्राम को 179 देशों ने अपना संयुक्त समर्थन प्रदान किया था। ऐसी उम्मीद थी कि यह एक्शन प्रोग्राम आने वाले दो दशकों तक अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय जनसंख्या नीतियां निर्धारित करने में मदद करेगा।

काहिरा प्रलेख, प्रजनन अधिकारों और प्रजनन स्वास्थ्य की धारणा को प्रोत्साहित करने वाला प्रथम व्यापक अंतर्राष्ट्रीय नीति दस्तावेज़ था। इस दस्तावेज़ की प्रगतिशीलता का श्रेय विश्व के महिला संगठनों के संयुक्त प्रयासों का नतीजा था।

काहिरा एक्शन प्रोग्राम में एक महत्वपूर्ण सुझाव था, जनसंख्या कार्यक्रमों को परिवार नियोजन के साथ-साथ प्रजनन स्वास्थ्य सेवाएं भी प्रदान करनी चाहिए। दस्तावेज़ में इस बात का भी उल्लेख था कि औरतों की उवर्रता में धीमापन तब तक नहीं आएगा जब तक बाल मृत्यु-दर कम नहीं होती, परिवार नियोजन की पूरी ज़िम्मेदारी पुरुष नहीं उठाते व औरते अपनी उवर्रता पर नियंत्रण और इस नियंत्रण के हक़ को पाने की सशक्तता हासिल नहीं कर लेतीं।

आज एक दशक बाद भी औरतों के प्रजनन अधिकार व स्वास्थ्य पहुंच से परे हैं। विश्व स्तर पर मातृ मृत्यु-दर के आंकड़ों में बढ़त देखी जा रही है। गर्भवस्था व प्रसव के दौरान जटिलताओं के कारण विश्व में सालाना छः लाख औरतें मरती हैं व अट्ठारह लाख अपंगता या रोगों का शिकार होती हैं। यह आकड़े दर्शाते हैं कि कुशल स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं के माध्यम से ज़रूरी व आपातकालीन सेवाएं लगभग गैर मौजूद हैं।

कुछ देशों जैसे पेरू में आज भी औरतों का जबरन बंधीकरण किया जाता है। इंडोनेशिया में आज भी गरीब औरतें गर्भ निरोधक साधनों से वंचित हैं। बाल मृत्यु-दर कई देशों में बढ़ती जा रही है; लगभग 70 प्रतिशत बच्चे डायरिया, निमोनिया, चेचक, मलेरिया व कुपोषण से मर जाते हैं। हर वर्ष अनुमानित 330 लाख लोग यौन रोगों व संक्रमण का शिकार हो रहे हैं जिसमें छः लाख एचआईवी/एड्स ग्रस्त हैं, जिनमें औरतें व बच्चे भी शामिल हैं। ऐसे में एक व्यापक स्वास्थ्य सेवा की बात क्या की जाए।

इन नकारात्मक स्वास्थ्य प्रवृत्तियों के लिए नई उदार आर्थिक व स्वास्थ्य नीति ज़िम्मेदार है जिनका कार्यान्वयन आर्थिक सुधार कार्यक्रमों, अंतर्राष्ट्रीय मुक्त व्यापार समझौतों व राष्ट्रीय स्तर की नीतियों के माध्यम से किया जा रहा है। ठीक इसी तरह काहिरा एक्शन प्रोग्राम के सुझावों को भी वैश्विक व राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों जो स्वास्थ्य नीतियों को भी प्रभावित करती हैं के कारणवश सही तरह लागू नहीं किया जा सका है। कुछ अन्य कारणों में धार्मिक कट्टरवाद और जनसंख्या बढ़ोत्तरी का डर भी शामिल है।

इन स्वास्थ्य सेवाओं के पतन और इनमें स्तरीय गिरावट ने प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक औरतों की पहुंच पर काफी नकारात्मक प्रभाव डाले हैं। पिछले कुछ दशकों में सरकार पर खर्च व सुविधाएं कम करने का दबाव है। लिहाज़ा काहिरा एक्शन प्रोग्राम का यह प्रस्ताव जिसमें परिवार नियोजन कार्यक्रमों का दायरा बढ़ाकर इसमें प्रजनन स्वास्थ्य सेवाएं शामिल करने की व इसे प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा ढांचे में समाहित करने की मांग कार्यान्वित नहीं की जा सकी। प्रोत्साहन व सहयोग के बावजूद निजी सेक्टर

इन ज़रूरी सेवाओं की कमी को पूरा करने में असमर्थ रहा है। व्यावसायिक क्षेत्र के लिए ये सेवाएं गैर मुनाफ़ाकार हैं व गैर सरकारी क्षेत्र के पास इस मांग को पूरा करने के लिए संसाधनों की कमी है।

इन नीतियों व बढ़ते धार्मिक कट्टरवाद की वजह से महिला अधिकारों के दायरे संकुचित होते जा रहे हैं। राष्ट्रवाद और धार्मिक कट्टरवाद बढ़ने का कारण है समुदाय, देशों और धार्मिक समूहों में बढ़ती असुरक्षा की भावना जिसके लिए पलायन, आर्थिक अस्थिरता, आतंकवाद आदि कारण ज़िम्मेदार हैं। इनके चलते समाज के प्रजातांत्रिक दायरे, नीतियां और नज़रिए तंग हो रहे हैं। औरतों के हक़ चयन और आवागमन पर अंकुश लगाए जा रहे हैं। काफी देशों में उन्हें घर में रहने, बच्चा पैदा करने और रिवाजों व परम्पराओं का अनुसरण करने के लिए बाध्य किया जा रहा है। कट्टरवादी समूहों और परम्परावादियों के दबाव से कुछ देशों में गर्भपात व गर्भ निरोधक विरोधी कानून बनाए जा रहे हैं। काहिरा कार्यक्रमों को लागू करने के लिए औरतों को अधिक समानता जानकारी व सेवाओं तक पहुंच व चयन की आज़ादी चाहिए।

विकास नीतियों के फलस्वरुप औरतों के प्रजनन व यौनिक स्वास्थ्य पर प्रहार किए जा रहे हैं। पिछले पचास से अधिक वर्षों में जनसंख्या विस्फोट व संसाधनों मे कमी हमारी जनसंख्या नीति का मुख्य केन्द्रबिन्दु रहा है। काहिरा प्रक्रिया पर अपना प्रभाव डालने के लिए कुछ महिला समूहों ने जनसंख्या समूहों सरकारों व डोनर संगठनों के साथ मिलकर एक बीच का रास्ता निकालने की कोशिश की। हालांकि वे "जनसंख्या विस्फोट" की सोच को पूरी तरह दबा नहीं सके पर इस प्रयास के फलस्वरूप जनसंख्या स्थाईकरण के साझे लक्ष्य को अपनाने का निर्णय लिया गया, पर जिसमें 'ज़बर्दस्ती' या 'दबाव' शामिल न हो। इसमें महिला सशक्तिकरण को जनसंख्या स्थाईकरण व औरतों की उर्वरता नियंत्रण के लिए ज़रूरी मानक बनाया गया। परन्तु तमाम कोशिशों के बावजूद आइसीपीडी के सुझाव के अनुसार साठ प्रतिशत निवेश परिवार नियोजन कार्यक्रम में ही किया गया।

महिला समूहों ने अब स्वीकार किया है कि प्रजनन व यौनिक अधिकारों व सामाजिक न्याय की मांग जनसंख्या ढांचे के बाहर रखकर ही की जानी चाहिए। साथ ही "जनसंख्या विस्फोट" की सोच को कल्याण, व राष्ट्रीय सुरक्षा, निजीकरण नीतियों के व औरतों के आत्म-निर्णय विरोधी मापदण्ड पर चुनौती दी जानी चाहिए। कुल मिलाकर प्रजनन और यौनिक अधिकारों की मांग करने वालों को आर्थिक, कट्टरवादी व जनसंख्या विस्फोट की राजनीति और जेंडर, नस्ल, वर्ग असमानताओं को कायम रखने वाली सोच और व्यवहार में बदलाव लाने होंगे।

साभार : लॉफिंग मैटर्स, जागोरी

राष्ट्रीय परिषद घोषणा पत्र

नवम्बर 2007

आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो यह विश्व आज जितना संपन्न है उतना कभी नहीं था। पर समाज के बड़े हिस्से के पास स्वस्थ और सृजनात्मक जीवन जीने के लिए संसाधन ही नहीं हैं। विश्वभर में स्वास्थ्य का स्तर या तो स्थिर हो चुका है या गिर रहा है। भूखे लोगों की तादाद हद पार कर चुकी है। विश्व की जनसंख्या का बड़ा तबका पानी और स्वच्छता सुविधाओं से वंचित है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वास्थ्य की स्थिति में असमानता बढ़ी है। विश्वभर में स्वास्थ्य क्षेत्र में लाए जा रहे सुधार के कारण गरीबों और वंचित समूहों, खासकर महिलाओं की स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच घट गई है। मातृत्व मृत्यु दर आज भी बहुत ऊंची है। कई संक्रामक रोग और बीमारियां जिनकी सहजता से रोकथाम की जा सकती है फैल रही हैं।

आज की यह स्थिति उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नव-आर्थिक नीतियों का नतीजा है। यह नीतियां गैट और ट्रिप्स जैसे व्यापार समझौतों के माध्यम से लोगों को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक न्याय से वंचित रख रही हैं। असहनीय आर्थिक तनाव, सांस्कृतिक विरोधाभास और सामाजिक असुरक्षा ने मिलकर एक ऐसा माहौल बना दिया है जिसमें आम जनता में मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएं बढ़ रही हैं।

एक लम्बे संघर्ष के बाद महिलाओं द्वारा हासिल किए गये न सिर्फ़ गर्भपात और प्रजनन स्वास्थ्य के अधिकार, बल्कि सभी हक़ आज खतरे में हैं। कुछ हद तक इन बदलावों के कारण ही महिलाओं पर घर के अंदर और बाहर होने वाली हिंसा विश्वभर में बढ़ रही है। नागरिक संघर्ष और विकास नीतियों के कारण अभूतपूर्व मात्रा में महिलाओं का विस्थापन हो रहा है। विश्वभर में, विशेषतः हमारे देश के अविकसित क्षेत्रों में गिरता स्त्री-पुरुष लिंग अनुपात प्रतिबिंब है बढ़ती महिला-विरोधी भावनाओं का।

वैज्ञानिक प्रजनन तकनीकों (एसिस्टेड रिप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी) जैसे नए वैश्विक 'उद्योग' उभर कर आए हैं जिन्होंने महिलाओं पर भारी बोझ डाल दिया है। गरीब देशों की महिलाओं का शरीर मानो उत्पादन के लिए कोई संसाधन बन गया हो। विश्व के सबसे बड़े महिला आंदोलन का भाग होने के नाते, हम भारतीय महिलाएं अब औरतों के स्वास्थ्य संबंधित मुद्दों को उस मुकाम तक पहुंचाना चाहती हैं जहां उन्हें होना चाहिए। भारतीय महिलाओं की इस स्वास्थ्य सनद के माध्यम से हम भारत के नीति-निर्माताओं और पितृसत्ता के भावी-धारकों के सामने भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति की भयानक वास्तविकता और आज के सिकुड़ते लोकतांत्रिक वातावरण में इनसे मिलती चुनौतियों के बारे में अपना मत व्यक्त करना चाहते हैं।

घोषणा पत्र

हम, 'महिला, स्वास्थ्य और विकास' के मुद्दों पर राष्ट्रीय परिषद के सहभागी और भारत की महिलाएं होने के नाते यह घोषणा करते हैं किः

1. स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवा बुनियादी मानव अधिकार हैं। स्वास्थ्य से संबंधित सभी नीतियों को जेंडर की दृष्टि से न्यायपूर्ण, समग्र ओर समतापूर्ण होना चाहिए। व्यापक स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और पहुंच सार्वभौमिक होनी चाहिए, उनकी पैसे भरने की क्षमता पर निर्भर किए बिना। यह बिना भेदभाव या कलंक के उपलब्ध हो और जिन लोगों की विशेष ज़रूरतें हों, उनका भी ध्यान रखती हो।
2. महिलाओं के स्वास्थ्य मुद्दों को मातृत्व तक ही सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। प्रजनन तथा प्रजनन आयु के बाहर भी उनके कई मुद्दे हैं। महिलाओं के व्यवसाय-संबंधित स्वास्थ्य के मुद्दों को महत्ता दी जानी चाहिए और मानसिक स्वास्थ्य को सभी स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रमों के साथ जोड़ा जाना चाहिए। सबके लिए स्वास्थ्य सेवा विकास व प्रावधान के रास्ते में बाधा खड़े करते महंगे और एक ही स्वास्थ्य समस्या पर

ध्यान देने वाले (वर्टिकल प्रोग्राम) स्वास्थ्य कार्यक्रमों की जगह सरकार द्वारा ऐसी सार्वभौमिक समग्र स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराई जाए जो सभी लोगों की ज़रूरतों की पूर्ति करे।

3. 'हिंसा से मुक्ति' सभी महिलाओं का मानव अधिकार है, विशेषतः उन महिलाओं का जो कठिन परिस्थितियों में हैं जैसे -जिन महिलाओं को मानसिक रोग हो या जो महिलाएं विकलांग हैं।

4. लोगों, खासकर महिलाओं व बच्चों की स्वास्थ्य सेवा आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए बजट में उचित धनराशि निर्धारित की जानी चाहिए जो सकल घरेलू उत्पाद का कम से कम 5 प्रतिशत हो (विश्व स्वास्थ्य संगठन की सिफ़ारिश के अनुसार)। साथ ही ऐसी कोई प्रतिगामी तथा सामाजिक दृष्टि से हानिकारक नीति नहीं होनी चाहिए जो असमानता बढ़ाए जैसे — शुल्क आधारित सेवा और अनावश्यक सरकारी-निजी भागीदारी।

5. स्वास्थ्य संबंधित सभी प्रौद्योगिक का चयन उचित और तर्कसंगत होना चाहिए, यह चयन रोग संबंधित आवश्यकताओं के आधार पर होना चाहिए, बाज़ारी मुनाफ़े के आधार पर नहीं, ताकि लोगों की आवश्यक टेक्नोलॉजी तक पहुंच आसान बने और इसकी पूर्ति हो, जब भी और अगर उन्हें इसकी आवश्यकता पड़े।

6. महिलाओं की बुद्धि, पारंपरिक ज्ञान तथा उपचार पद्धति को पूर्ण सम्मान और मान्यता दी जानी चाहिए। देशी चिकित्सा प्रणाली को सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में सम्मिलित करने के लिए ठोस कदम उठाए जाने चाहिए।

7. रोज़गार, स्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा, ऋण तथा सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने और सार्वजनिक जगहों व सुविधाओं में प्रवेश लेने के लिए किसी भी महिला के साथ लिंग, जाति, धर्म, वर्ग विकलांगता, एच.आई.वी स्थिति, वैवाहिक स्थिति, यौनिकता, प्रजनन क्षमता आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव न किया जाए।

8. महिलाओं को अपने प्रजनन व यौनिक अधिकारों की अभिव्यक्ति व चयन का अधिकार होना चाहिए, पितृसत्तात्मक मानकों के दबाव या पाबंदियों के बिना।

9. सभी महिलाओं को सुरक्षित, प्रभावी, परिवर्तनीय और उपभोक्ता-नियंत्रित गर्भनिरोधक तक पहुंच का अधिकार है, जो पुरुषों की सहभागिता बढ़ाते हों। हम उन सभी जनसंख्या नीतियों का विरोध करते हैं जो जबरन जन्म को बढ़ावा देती हों या विरोध करती हों।

10. व्यापार संबंधित कानून और पेटन्ट से लोगों की अनिवार्य दवाइयों और तकनीकों तक पहुंच कम नहीं होनी चाहिए। किसी भी प्रकार के प्राणी, जीव पर 'पेटंट' और जैविक-विविधता तथा लोगों के ज्ञान के व्यापार पर किसी एक कंपनी के एकाधिकार का हम विरोध करते हैं।

11. आर्थिक विकास जो समाज के कुछ हिस्सों को वंचित करता है, वो समाज के स्वास्थ्य और उसकी खुशहाली के लिए घातक सिद्ध हुआ है। उसी तरह सेना पर खर्च और युद्ध भी लोगों के स्वास्थ्य की कीमत पर होते है।

पानी, अन्न, शिक्षा, रोज़गार, आवास और स्वास्थ्य सुविधा जैसे स्वास्थ्य के सामाजिक कारकों तक पहुंच सुनिश्चित करने वाली बुनियादी सुविधाओं का प्रावधान करने से सरकार का परहेज़ हमें मान्य नहीं। शांति और न्याय की ओर हमारा समर्पण केवल उनके अंतर्निहित मूल्यों के कारण ही नहीं, पर हम इन्हें अपने बच्चों और भविष्य के लिए एक संजोयी विरासत के रूप में भी छोड़ना चाहते हैं। हम जिस तरह के विश्व की कामना करते हैं उसमें भेदभाव और पूर्वधारणा, असहिष्णुता और भय, लालच और दमन, हिंसा, क्रोध और द्वेष के लिए कोई स्थान नहीं है। ऐसा विश्व ही सही मायने में स्वस्थ विश्व हो सकता है।

अपनी-अपनी खुशबू

विजयदान देथा

पानी के सहारे मछलियां जीती हैं और मछलियों के सहारे मछुए। मीठे पानी की झील के किनारे एक मछुए की झोंपड़ी थी। झोंपड़ी के सामने लिपे हुए आंगन में तरह-तरह की मछलियां सूखती रहती थीं। झोंपड़ी के ऊपर भी मछलियां और कोने-चबूतरे पर भी मछलियां। चौतरफ हवा में मिचली-मिचली दुर्गन्ध होते हुए भी उस घर वाले उस बदबू के आदी हो चुके थे। मछलियों की मिचलाहट के लिए उनकी नाक की ग्रन्थियां मर चुकी थीं।

टोकरी में ताज़ी मछलियां लेकर मछुवन पास के नगर में बेचने के लिए जाती थी। एक दफ़ा चौमासे में मछलियों की टोकरी सिर पर उठाकर जब मछुवन चलने लगी तब मछुए ने उसे सतर्क करते कहा, 'आज बरखा की रंगत बड़ी बेढब लग रही है। वापस जल्दी आना। मुझे नदी आने का अन्देशा है।'

फिर मुस्कराते हुए मछुआ आगे कहने लगा, 'बहती नदी में हरगिज़ पांव मत रखना। मेरी ज़िन्दगी बिगड़ जाएगी। तीसरा घर बड़ी मुश्किल से बसेगा।'

मछुवन पीछे मुड़कर बोली, 'मुझे भी अपनी जान प्यारी है।'

दूध से जला छाछ को भी फूंक-फूंककर पीता है— कुछ ऐसी ही अतिरिक्त सावचेती मछुए की हिदायत में थी। पिछले साल पहली घरवाली इसी नदी में डूबकर मर गई थी। घुटनों तक पानी के भरोसे अन्दर उतर गई सो मंझदार में तीव्र वेग के थपेड़ों से पैरों की ज़मीन छूट गई। खूब हाथ-पांव मारे पर कोई बस नहीं चला।

मछुओं को हवा, उमस और बरखा की ज़बरदस्त पहचान होती है। नदी पार कर नगर में घुसते ही पानी बरसने लगा। मछुवन के मन में बेहद हड़बड़ी मची। भीगते-भीगते सारी मछलियां जैसे-तैसे बेच डालीं। वापस बेतहाशा भागती हुई नदी के किनारे आई, पर नदी विकट रूप से बह रही थी। देखने मात्र से ही डर लगे, ऐसा उत्कट वेग! पहाड़ की ढलान से पछाड़ खाता पानी नदी के बीच आते ही मचलने लगता था।

पति की बात का खयाल आते ही मछुवन फौरन वापस मुड़ गई। अब जाए तो कहां जाए! अनजानी बस्ती! कहां रात गुज़ारे! संयोग की बात कि थोड़ी दूर जाने पर सामने से एक मालन आती दिखाई दी। पास में राजा का सुन्दर बगीचा था। घर का काम-काज निबटाकर वह बगीचे की निगरानी के लिए जा रही थी। कई मर्तबा दोनों का राह में आमना-सामना होता था, पर फकत दुआ-सलाम करके आगे बढ़ जाती। काम की जल्दी। धन्धे की हड़बड़ी।

मछुवन के रंग-ढंग देखते ही मालन बिना कहे उसकी परेशानी का कारण समझ गई। बोली, 'नदी आ गई तो क्या हुआ! चल मेरे साथ। बहुत जगह है।'

मछुवन उसका एहसान मानते हुए तुरन्त उसके साथ चल पड़ी।

बरखा काफ़ी धीमी हो गई थी। थोड़ी दूर चलने के उपरान्त मालन ने मछुवन को बुरी तरह भीगे हुए देखा तो कहने लगी, 'ठंड लग रही हो तो मेरी बरसाती ले ले।'

मछुवन मुस्कराते बोले, 'हमें भी मछलियों की तरह पानी से ठंड नहीं लगती। हम तो बरखा और पानी के आदी हैं।'

घरेलू बातें करती हुई दोनों बगीचे के नज़दीक पहुंची...। अचानक तीन-चार दफ़ा ज़ोर से सांस खींचकर मछुवन ने पूछा, 'यह कैसी गन्ध आ रही है?'

मालन ने सरल भाव से जवाब दिया, 'बगीचे की।'

'बगीचे की?'

मालन मोद-भरे सुर में राजा के बगीचे की प्रशंसा करते कहने लगी, 'इसमें अचरज की क्या बात है? ऐसा शानदार बगीचा तो सौ-सौ कोस में भी नहीं मिलेगा। आस-पास के सभी रजवाड़े आए-दिन मेरे बगीचे की कलमें और दाबें मंगाते हैं। चमेली की, मोगरे की, केवड़े की, चम्पा की, गुलाब की...!'

मछुवन ने नाक भींचकर बीच ही में पूछा, 'तू रात को यहीं सोती है?'

भांति-भांति के फूलों की खुशबू के गुमान में खोई मालन ने तुरन्त जवाब दिया, 'और कहां सोऊंगी? इस बगीचे के अलावा मुझे दूसरी जगह नींद ही नहीं आती। यहां की तो मिट्टी में भी खुशबू घुली हुई है। तेरी इच्छा हो तो तू भी पांच-पचीस पौधे ले जाना। फूल देखने पर मेरी याद तो आएगी।'

सांस रोकते हुए मछुवन ने बड़ी कठिनाई से मुंह खोला, 'फूलों के बिना क्या याद नहीं आएगी?'

बरखा बिल्कुल थम गई थी। बरसाती उतारते हुए मालन उदारता से बोली, 'तुझसे फूल दूर थोड़े ही हैं! इतना दुराव-संकोच भी किस काम का!'

बगीचे के फाटक को खोलते मालन आगे कहने लगी, 'मुझे राजाजी की पूरी छूट है। तुझे फूलों की टोकरी भरकर दूं तब भी मुझे उलाहना नहीं देंगे।'

बगीचे के भीतर पैर रखते ही मछुवन का सर फटने लगा। नाक और मुंह पर ओढ़नी का पल्लू रखते हुए धीरे-धीरे बोली, 'पर अपन उलाहने जैसा काम ही क्यूं करें? मैं फूलों का क्या करूंगी?'

मालन आश्चर्य प्रकट करते कहने लगी, 'क्या करेगी? तुझे अभी मेरे फूलों का अंदाज़ नहीं है। बड़े-बड़े राव-उमराव इस बगीचे के एक फूल की खातिर तरसते हैं! एक दफ़ा हाथ में लेने से तीन दिन तक खुशबू नहीं छूटती।'

मछुवन का जी बुरी तरह मिचलाने लगा। इस बदबू में मालन कैसे सांस लेती है? मछुवन को तो यहां नींद आनी ही मुश्किल है। उसके नथुने तो मानो झुलस गए हों। ऐसा बदबूदार बगीचा राजाजी के किस काम का? मछुवन के मन में इस तरह के कई बुलबुले उठे, पर प्रफुल्लित मालन से कुछ भी पूछने की हिम्मत नहीं हुई।

कोठरी का दरवाज़ा खोलकर मालन ने मछुवन के भीगे कपड़ों पर हाथ फेरा और बोली, 'तू अन्दर बैठ। मैं अभी पास की कोठरी से तेरे लिए दूसरे कपड़े लेकर आती हूं।'

मछुवन के बार-बार मना करने के बावजूद वह नहीं मानी। कोठरी में घुसने पर थोड़ी-बहुत मिचलाहट कम हुई। गर्व से फूली हुई मालन कपड़ों के साथ फूल भी ले आई। मछुवन के सामने फूल रखते ही उसका जी बुरी तरह मिचलाने लगा। कै होते-होते बची।

अचानक मालन ने दो-तीन मर्तबा ज़ोर-ज़ोर से सांस लेते हुए पूछा, 'यह क्या गंध आ रही है? इस कोठरी में ऐसी मिचलाहट तो कभी नहीं आई?'

इधर-उधर टोह लेती हुई मालन की नज़र कोने में रखी टोकरी पर अटकी। वो तुरन्त मिचलाहट का कारण समझ गई। झुंझलाहट दरसाते बोली, 'यह खाली टोकरी भीतर क्यूं ले आई? मछलियों की दुर्गन्ध से मेरा तो सर फटा जा रहा है!'

मछुवन क्या जवाब देती? उसकी दुविधा ताड़कर मालन ने खुद अपने हाथों टोकरी उठाकर बाहर रख दी। हाथ को सूंघा तो वैसी ही मिचलाहट! रेत से रगड़-रगड़कर उसने दो-तीन दफ़ा हाथ धोए।

ब्यालू करने के लिए मछुवन बड़ी मुश्किल से मानी। अगर कै हो गई तो कितना भद्दा लगेगा।

ब्यालू से निवृत्त होकर मालन जब पास की कोठरी में सोने गई तब कहीं मछुवन की जान-में-जान आई। नहीं तो सारी रात जगना पड़ता।

उधर मछुवन से दूर होने पर मालन ने खैर मनाई। मछुवन के शरीर से कितनी बुरी मिचलाहट आ रही थी! पर लिहाज़ के कारण कुछ कहा नहीं।

और उधर मछुवन ने भी मालन का कम लिहाज़ नहीं रखा था। घड़ी-डेढ़-घड़ी तक तो जैसे-तैसे कोठरी में करवटें बदलती रही। पर आखिर धीरे-धीरे पंजों के बल बाहर निकली। अपनी टोकरी लेकर वापस आई। मुंह पर मछलियों की खाली टोकरी रखते ही उसका जी हलका हो गया। अब तो वह मरकर भी किसी बगीचे में रातवासे के लिए तैयार नहीं होगी। आज फंसी, वह बहुत है। थोड़ी देर बाद टोकरी की भीनी खुशबू के फलस्वरूप वो खर्राटे भरने लगी।

कविता

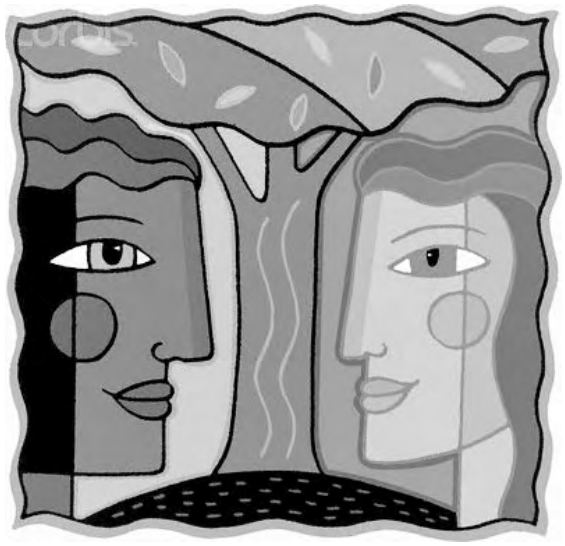

पुरुष

पवन करण

एक बार मैंने उसे अपने सामने बिठाकर
प्यार से समझाने की कोशिश की तो वह
बुरी तरह बिफर गई मुझ पर ही
और चीखते हुए बोली,
अभी क्या हमारी उम्र निकल गई है
जो हम किसी और का बच्चा गोद लें।
मुझे ईश्वर पर पूरा भरोसा है,
मैं कभी भी तुम्हारे बच्चे की मां बन सकती हूं
और तुम अपने खुद के बच्चे के पिता,
क्या लोगों के यहां देरी से बच्चे पैदा नहीं होते?

एक बार फिर मैं उसके साथ इस मैदान में,
समझाईस का खेल खेलते हुए
उससे बुरी तरह हार गया।
अपनी ही सलाइयों से अपने आपको उधेड़ता-बुनता
हमेशा के लिए पराजित एक योद्धा की तरह,
एक बार फिर जा बैठा मैं अपने भीतर
के कोप भवन में।

किस तरह समझाऊं मैं उसे जब मेरी शिराओं में
वह आवश्यक उपलब्धता ही नहीं
तो उसमें उसका ईश्वर क्या कर लेगा?
वह आकर मेरे वीर्य में अपना वीर्य मिलाने
से तो रहा
और न ही वह उसकी पूजा-पाठ से प्रसन्न होकर
उसके बिस्तर में घुसकर चुपचाप
उसकी योनि में जीव रोपण करने वाला।
यह काम तो कोई पुरुष ही करेगा,
और निश्चित तौर पर वह पुरुष मैं नहीं।

मैं उसे अच्छी तरह समझाना चाहता हूं कि
एक इस रास्ते के हमारे पास कोई रास्ता नहीं
कि हम विज्ञान के डर से भागकर
एक टीले की ओट में हांफते ईश्वर की जगह
एक मनुष्य पर करें भरोसा।
मगर वह मेरी बात सुनने को तैयार नहीं कतई
वह अपनी ही कोख से बच्चे को जन्म
देना चाहती है,
वह अपनी कोख से मेरा ही बच्चा जनना चाहती है
अफसोस वह इसके लिए मुझसे लगाए बैठी है आस।

मैं उसे कई बार इस बारे में समझाने
की करता हूं कोशिश।
लेकिन वह हर बार मुझे यह कहकर
कर देती है निरुत्तर, की कोई कमी नहीं तुममें
तुम्हारे बारे में मुझसे बेहतर कौन जानता होगा

उस मामले में तुमसे ज़्यादा शैतान कोई नहीं होगा।

यह आदिम इच्छा उसकी मुझे अक्सर
बौखलाने पर कर देती है मजबूर
उसकी इस ज़िद की पूर्ति के बारे में मैं
तरह-तरह से सोचता हूं, सोचता क्या हूं
अपने ही भीतर छटपटाता हूं,
क्या किसी भी तरह उसकी यह इच्छा
नहीं हो सकती पूरी?

क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मेरी अनुपस्थिति में
कोई आए और उससे कर जाए ज़बर्दस्ती
और वह चुपचाप रह जाए सहकर
नहीं बताए किसी को, मुझे भी नहीं
और फिर जो परिणाम निकले वह मेरा कहलाए?

एक बात मैं उससे हर बार पूछने की सोचता हूं
लेकिन हर बार रह जाता हूं सहमकर
क्यों उसका कोई प्रेमी नहीं पुराना
यदि हां तो क्या अब भी मिलती है उससे,
यदि मिलती है तो कितना मिलती है?
मुझे लगता है वह उससे उस तरह नहीं मिलती
जिस तरह मिलती है मुझसे, अन्यथा मेरे सिर से
यह कलंक कब का मिट गया होता,
लगता है उसका कोई प्रेमी ही नहीं
काश वह होता तो आज कितने काम आता।

क्या ऐसा नहीं हो सकता कि वह घर में ही
कर ले कुछ ऐसा वैसा आखिर ऐसा तो नहीं
वे सब भी मेरी तरह हों अनुत्तीर्ण?
किसी एक को बना ले वह अपना साझीदार,
ऐसा नहीं कि दुनिया में काम इस तरह न चलते हों
फिर यह ठीक भी होगा, घर का सुख
बहेगा घर में ही, मक्खन भी मिल जाएगा
और नहीं फूटेगी मटकी भी।

सोचता हूं और पूरी बेशर्मी से सोचता हूं
अपने ही तल में नीचे गिरकर सोचता हूं
कि आखिर किस संकेत से समझाऊं
उसे मैं यह सब, आखिर इस मामले में
सब करना-धरना तो उसे ही है,
सब होना-धोना तो उसके साथ ही है।
कभी-कभी तो सोचता हूं क्यों न मैं ही भेज दूं
उसके पास किसी और को और खुद
खड़ा हो जाऊं दरवाज़े पर लेकर लाठी।

एक पुरुष होने के बाद एक बच्चे को पाने के लिए यह
जानते हुए भी कि बाज़ी मेरे हाथ से
निकल भी सकती है, बिगड़ भी सकती है बात
सब करने के लिए तैयार हूं मैं,
आखिर यह बात यह तो बस उसके भीतर
या फिर सिर्फ़ मेरे भीतर
या हम दोनों के भीतर ही तो रहनी है।
फिर दुनिया कुछ अंदाज़ लगाती भी है
तो लगाती रहे
जब हमारे ही मुंह नहीं खुलने तो
फिर दुनिया के खुले हुए मुंह की तरफ क्या देखना?

और जब मैं इस तरह सोचता हूं तो मुझे
अच्छी लगने लगती है उसकी ज़िद
एक बच्चे को मैं भले ही अपने बच्चे की तरह
चाहता होऊं गोद लेना, लेकिन उससे पहले
मैं भी तो यही चाहता हूं कि मेरी पत्नी की कोख से
एक बच्चा ले जन्म जो कहलाए मेरा
जिसे मेरी पत्नी मेरा बच्चा कहे
और अपनी पत्नी के आगे मैं उसे अपना।

जिसके जन्म लेने के कुछ दिन बाद बक्से में से
मैं अपनी मेडिकल रिपोर्ट निकालूं
और चुपचाप आग में झोंक दूं जाकर।

कूड़ा बीनने का काम करती महिलाएं

फोटो: आंचल कपूर

काम व महिलाओं की स्वास्थ्य सुरक्षा

आंचल कपूर

एक महिला कामगार के नज़रिए से जब भी हम काम, स्वास्थ्य और सुरक्षा की बात करते हैं तब हम उस औरत को एक श्रमिक और उसके काम को श्रम के रूप में आंकते हैं। इस सोच के पीछे सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक व कई अन्य विशिष्ट कारण हैं जो भारत में अनौपचारिक कार्यक्षेत्रों से जुड़ी महिलाओं के लिए खास मायने रखते हैं। एक औरत के लिए उसका जेंडर यानि उसका औरत होना उसके श्रम और स्वास्थ्य सुरक्षा पर एक विशेष नज़रिया डालने के लिए बाध्य करता है जो पुरुष श्रमिकों पर लागू नहीं किया जा सकता, हालांकि स्वास्थ्य और सुरक्षा के मुद्दे दोनों के लिए बराबर महत्वपूर्ण हैं।

अब सवाल यह उठता है कि श्रम पर एक आम नज़रिया, जिसमें स्त्री-पुरुष दोनों से जुड़ी समस्याएं पहचानी जा सकें न देखकर हम सिर्फ़ औरतों के स्वास्थ्य की बात क्यों करना चाहते हैं? इस प्रश्न का सीधा उत्तर है— महिलाओं, श्रम और स्वास्थ्य सुरक्षा के अंतरंग संबंध की अहमियत औरतों की जैविक ज़रूरतों जिसमें प्रजनन, बच्चों की देखभाल शामिल है, श्रम के एक अलग स्वरूप की मांग

करती है जिसके चलते स्त्रियों की अलग से बात करनी अहम हो जाती है। औरत की ज़िम्मेदारियां तड़के घरेलू काम से शुरू होकर, दफ्तर से गुज़रते हुए, देर रात को घर के काम निपटाने के साथ समाप्त होती हैं। औरत चाहे खेत मज़दूर हो या घर पर पीस रेट पर काम करे, दिहाड़ी मज़दूरी या मिल-फैक्टरी या ट्रेवल एजेंसी में नौकरी करे, उसके काम का स्वरूप उसके स्वास्थ्य और सेहत पर होने वाले खतरों पर अपना प्रभाव डालता है।

स्वास्थ्य की एक सम्पूर्ण परिभाषा जिसमें "सिर्फ़ रोग या अस्वस्थता का अभाव ही नहीं बल्कि पूरी शारीरिक, मानसिक व सामाजिक कुशलता शामिल हो" का सिद्धांत इस सच्चाई को रेखांकित करता है कि एक 'श्रमिक' जिसका स्वास्थ्य आर्थिक या सामाजिक कारणों से नज़रअंदाज़ किया गया हो एक स्वस्थ कामगार नहीं हो सकता। इस परिभाषा के दायरे में अनौपचारिक क्षेत्र के काम, घरेलू काम, घर आधारित काम, सेक्स वर्क सभी शामिल किए गये हैं जिससे कार्य स्थल से जुड़े स्वास्थ्य के खतरों का दायरा और विस्तृत हो जाता है।

महिलाओं के स्वास्थ्य पर असर डालने वाले कारकों की जटिलताओं को समझने के लिए हम कुछ उदाहरणों और केस स्टडीज़ पर नज़र डालते हैं। बीड़ी बनाना भारत का एक ऐसा पारम्परिक उद्योग जिसका काम अधिकतर समय घर से ही किया जाता है। भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार 22 लाख औरतें बीड़ी बनाने का काम करती हैं। इस काम में कौशल के साथ-साथ कड़ी मेहनत लगती है क्योंकि एक-एक बीड़ी बनाने के लिए तेंदू के पत्ते में तम्बाकू को लपेटा जाता है। अधिकांश बीड़ी कामगार निम्न सामाजिक-आर्थिक वर्ग से आते हैं और उनकी मूल स्वास्थ्य समस्याएं इसी गतिविधि से जुड़ी हैं। इस काम में लगातार झुककर बैठना पड़ता है, तम्बाकू और तम्बाकू की गंध, धूल तथा काम की परिस्थितियां कठोर होती हैं। इस काम में ठेकेदारों तथा बिचौलियों की मनमानी और कामगारों के आर्थिक हालात उन्हें शोषण झेलने के लिए मजबूर करते हैं। काम के लम्बे घंटे, आजीविका के विकल्पों का अभाव तथा उसके हक़ में कानूनों का पक्ष, कामगारों के लिए विपरीत हालात पैदा करता है। अहमदाबाद के स्वास्थ्य संस्थान के शोध से यह पाया गया कि बीड़ी उद्योग में उड़ने वाली तम्बाकू की धूल से आंखों में जलन, कनजंक्टिवाइटिस, राहाइनिटिस, म्यूकोसल ड्राइनेस, डर्मेटाइटिस, ब्रांकाइटिस, एम्फिसेमा आदि रोग पैदा होते हैं। औरतों के कुछ खास परीक्षण से यह भी पाया गया कि लगभग 90-91 प्रतिशत औरतों को थकान और चक्कर आने की, 62 प्रतिशत को पेडू का दर्द, 54 प्रतिशत को सफेद पानी व 58 प्रतिशत को अनियमित महावारी की शिकायत थी। लगभग सभी बीड़ी कामगारों में गर्भपात व खून की कमी एक आम समस्या थी।

हमारे कुछ सालों के अनुभव दर्शाते हैं कि कम वेतन तथा अशक्तता वाले कामों में औरतों की भागीदारी उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर डालती है। जैसे नर्स का काम जिसमें खास तरह की कुशलता की ज़रूरत होती है। इन पेशों से अधिकतर औरतें ही जुड़ी होती हैं। इन कामों का चरित्र ऐसा है कि इनमें एक तरह के काम को बार-बार करना पड़ता है जिससे स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। नर्सों को संक्रमण रोग तथा रुबेला जैसी वायरल बीमारियों का होना आम है। अगर नर्स गर्भवती है तो गर्भ की विकृति, सुनने की क्षीण शक्ति, हेपिटाइटस बी व एचआईवी संक्रमण होने का डर बना रहता है। सर्जरी में मदद करने वाली नर्सों को रेडिएशन, ब्लडबैंक या सुई लगाते समय अलग तरह के खतरों का समाना करना पड़ता है।

ठीक इसी तरह इलैक्ट्रॉनिक उद्योग में काम करने वाली महिलाएं मशीनों के सूक्ष्म हिस्सों को एकटक देखने के कारण पीठदर्द, धुंधलाती आखों की रोशनी, तनाव, सुनने की शक्ति में कमी, थकान व सरदर्द से ग्रस्त रहती हैं। इन उद्योगों में इस्तेमाल होने वाले रसायनों व तेज़ाब से उल्टी, चक्कर, अंगों की विकृति, कैंसर, फेफड़ों के रोग व जलने जैसी तकलीफ़ें आम हैं।

इनके अलावा कुछ ऐसे आम मुद्दे हैं जिनकी जड़ें औरत के घर-बाहर के काम से जुड़ी हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि एक सेक्रेटरी का काम घर चलाने जैसा है जिसमें प्रबंध, देखभाल, सफ़ाई जैसी क्रियाएं शामिल हैं जो बर्तन धोने, झाडू-पोंछा करने जितनी ही तनावग्रस्त व ऊबाऊ हैं। कुछ ऐसा ही स्कूल में पढ़ाने के काम के लिए कहा जा सकता है जो बच्चों की देखभाल से जुड़ा है। जेंडर के आधार पर काम का विभाजन आर्थिक सशक्तता की गुंजाइश कम

सब्ज़ी वाली

फोटो: आंचल कपूर

कर देता है क्योंकि औरतों को ऐसे काम नहीं मिल पाते जो उनके आर्थिक हालात सुधारने में सहायक हों। निम्न आर्थिक सुरक्षा के मायने हैं स्वास्थ्य और पोषक खान-पान में कमी। उदारीकरण के चलते औरतों को लुभाने वाले, लचीले काम के घंटों वाली भूमिकाएं और नौकरियां जो घर से ही की जा सकती हैं और जहां औरतें काम के साथ घर व बच्चों की देखरेख भी कर सकती हैं दरअसल एक ऐसा शिकंजा है जिसमें कम पैसा व कठोर श्रम लगता है।

काम की परिस्थितियों के तमाम मानकों के ज़रिए हम यह पहचान सकते हैं कि रोज़गार या काम का स्वरूप फिर चाहे वह अनौपचारिक, घर-आधारित या दफ्तर का हो, औरतों की पहुंच को स्वास्थ्य सेवाओं और पोषण से दूर करता है। समाज व परिवार में औरतों की सेहत व स्वास्थ्य में गिरावट उनकी बीमारियों से लड़ने की क्षमता को कम कर देती है। घर के काम को खासकर श्रम के दायरे से बाहर ही रखा जाता है जबकि इनमें बड़ी संख्या में औरतें जुड़ी रहती हैं और घर के काम के फलस्वरूप न जाने कितनी स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करती हैं। इसलिए यह ज़रूरी है कि घर के काम के दबाव और खतरों से जूझने के लिए मुनासिब मापदण्ड तय किए जाएं। साथ ही घर व बाहर के अवैतनिक व वेतनयुक्त काम के बीच की सीमा रेखा को भी मिटाने के लिए सघन प्रयास किए जाने चाहिए।

ठीक इसी तरह यौनकर्म जैसे व्यवसाय जो औरतों की शारीरिक शक्ति पर निर्भर हैं, के संदर्भ में स्वास्थ्य से जुड़े खतरे और अधिक गम्भीर हो जाते हैं। इस गंभीर हालात को और बदतर बनाने वाली त्रासदी है समाज की सोच कि ये सभी "औरतों की समस्याएं" हैं जिनका निदान औरतें स्वयं कर सकती हैं। हालांकि इस सच से सभी वाकिफ़ हैं कि औरतों के पास इनसे निपटने का ज्ञान, संसाधन, आवागमन सुविधा व तयशुदा नैतिक ढांचा भी मुहैय्या नहीं है। और जिसके मायने यह भी हुए कि इन समस्याओं का दरअसल निदान होता ही नहीं है। काम की स्थितियों का जायज़ा लेने और सामाजिक सुरक्षा सुविधाएं मुहैय्या कराने के लिए कानून मौजूद हैं पर शिक्षा के अभाव के कारण औरतों के पास इन कानूनों को इस्तेमाल में लाने की चेतना व जानकारी दोनों ही नहीं होती। ट्रेड यूनियनों में औरतों की कम तादाद तथा विविध कार्य स्थलों पर काम करने वाली औरतों में श्रमचेतना का अभाव उन्हें अपने मूल अधिकारों की मांग के लिए संगठित होने से रोकता है जो दरअसल लंबे दौर में काम के और कार्य प्रणाली में निहित स्वास्थ्य खतरों को कम करने में सहायक हो सकता है।

प्रजनन तकनीकें: सहायक या नियंत्रक?

जुही जैन

सन् 2004-2006 के दौरान समा, महिला व स्वास्थ्य संदर्भ समूह ने महिलाओं के जीवन पर एआरटी यानी प्रजनन में सहायक तकनीकियों के प्रभाव व इनके चिकित्सकीय, सामाजिक, नैतिक पहलुओं पर दिल्ली, मुंबई व हैदराबाद में एक अध्ययन किया। इस अध्ययन में तकनीकी सुविधा प्रदान करने वाले 23 एआरटी डॉक्टर, विभिन्न प्रजनन तकनीकी प्रक्रियाओं से गुज़रती व उन पर सलाह के लिए आई 25 विवाहित महिलाएं शामिल थीं। इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य थे: यह तय करना कि महिलाएं किसी परिस्थिति में एआरटी के लिए आगे आती हैं व इसकी क्या शारीरिक, सामाजिक व आर्थिक कीमत चुकाती हैं; यह समझना कि एआरटी तकनीक प्रदान करने वाले उपचार व उसका उपयोग करने वालों के प्रति क्या राय रखते हैं एवं उनका क्या महत्व है; उपचार के बारे में महिलाओं की राय व अनुभवों को समझना; और राष्ट्र स्तर पर इस संबंध में नियमों-कानूनों व इनमें छिपे नैतिक मुद्दों पर समझ बनाना। अध्ययन से मिलने वाली जानकारी 'एआरटी और महिलाएं' प्रकाशन में विस्तार से पेश की गई हैं।

पिछले दो दशकों में ऐसी तकनीकों की भरमार हुई है जो निसंतान दम्पत्ति को संतानोत्पत्ति में सहायता करें। एआरटी यानि "एसिस्टेड रिप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी" प्रजनन में सहायक ऐसी तकनीकें हैं जिनके तहत कई प्रक्रियाएं शामिल हैं। इनमें सामान्य इंट्रायूटिराइन इनसेमिनेशन (गर्भाशय में वीर्य पहुंचाकर गर्भाधान करवाना), इन-विट्रो फर्टीलाइजेशन (परखनली शिशु तकनीक) व भ्रूण स्थानांतरण (आईवीएफ-ईटी) जिसे हम टेस्ट ट्यूब बेबी तकनीक भी कहते हैं उल्लेखनीय हैं। वैसे तो संतानोत्पत्ति के कृत्रिम उपायों की जानकारी 1870 के दशक से प्रचलित है पर 20वीं सदी के आरम्भ से इनका चलन एक आम बात हो गई है जिसने गर्भधारण, मातृत्व और संतान से संबंधित धारणाओं को एक नया आयाम दिया है।

1978 में इंग्लैंड में लुई ब्राउन, दुनिया की पहली टेस्ट ट्यूब बेबी के जन्म के साथ ही एक नए युग की शुरूआत हुई। मीडिया ने इस घटना को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया, ऐसा दर्शाया गया जैसे इस तकनीक से महिलाओं को अपनी गर्भधारण क्षमता को खुद नियंत्रित करने की आज़ादी मिल गई है। इस बात से कोई इंकार नहीं है कि टेस्ट ट्यूब बेबी का जन्म विज्ञान और प्रजनन के क्षेत्र में अग्रणी कदम था; पर क्योंकि यह प्रक्रिया स्वास्थ्य, महिलाओं, तकनीक और समाज से संबंधित है इसलिए इसका विश्लेषण करना ज़रूरी है।

पितृसत्तात्मक समाज में औरतों पर संतान पैदा करने का दबाव अक्सर बना रहता है। दूसरी ओर एआरटी के बढ़ते चलन से उनके दैनिक जीवन पर चिकित्सकीय बोझ भी पड़ता है। इस अवधारणा के पीछे यह ऐतिहासिक तथ्य

एआरटी तकनीकें औरतों की मां बनने की इच्छा को पूरा करने में सहायक तो हो सकती हैं पर इसका उनके शरीर, स्वास्थ्य और जीवन पर असर पड़ता है। पितृसत्तात्मक, पुरुष प्रधान समाज और बाज़ारीकरण के संदर्भ में यह बात और भी मायने रखती है। सामाजिक संरचनाओं, वैज्ञानिक संस्थाओं और व्यापक स्तर पर एआरटी तकनीकों के बीच संबंध औरतों के लिए क्या मायने रखते हैं, इससे यह पहलू मापना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

है कि किसी ऐसे वर्ग में जो शोषण प्रधान और असमान संबंधों से ग्रस्त हो, किसी नई तकनीक के आने से गैर बराबरी और शोषण में बढ़ोत्तरी ही होती है। कुछ ऐसा ही इन एआरटी तकनीकों के आगमन से हुआ है।

भारत में 1986 में पहले आईवीएफ़ शिशु, हर्षा का जन्म, इंस्टीट्यूट फ़ॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन और किंग एडवर्ड्स मेमोरियल अस्पताल के संयुक्त प्रयासों से हुआ। इस प्रयास के पीछे प्रसूति विशेषज्ञा, डॉ. इंदिरा हिंदूजा और डॉ. टी सी आनंद प्रमुख थे। इस प्रयास के साथ-साथ सुनियोजित ढंग से सरकार के जनसंख्या नियंत्रण लक्ष्य भी सामने आते हैं। आईसीएमआर के बुलेटिन के अनुसार *"भारत में नसबंदी गर्भनिरोध का सबसे प्रचलित माध्यम है। बाल मृत्यु की अधिक दर के चलते कई महिलाएं जिन्होंने नसबंदी करा ली है, फिर से नली खुलवाने के लिए आगे आ रही हैं। नसबंदी के बाद नली खुलवाने की तुलना में आईवीएफ़ भ्रूण स्थानांतरण में कम शल्य उपचार करना पड़ता है। लिहाज़ा अगर किसी दम्पत्ति को यह विश्वास हो जाए कि किसी दुर्भाग्यपूर्ण बच्चा खोने की स्थिति में आईवीएफ़-भ्रूण से पुनः गर्भधारण संभव है तो वह सहर्ष नसबंदी को परिवार नियोजन पद्धति के रूप में अपनाने के लिए तैयार हो जाएगा। ऐसे में परखनली शिशु तकनीक हमारे राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम के लिए बहुत अहम हो जाएगी।"* सचमुच इससे गर्भधारण और गर्भनिरोध तकनीकों के बीच के अटूट संबंध का सच सामने आता है। दरअसल तकनीकी विविधता के ये दो पहलू हैं; दोनों में लक्ष्य महिला शरीर है और उनकी शारीरिक क्रियाओं में हस्तक्षेप कर उनकी संतानोत्पत्ति की क्षमता पर नियंत्रण का प्रयास किया जाता है।

एआरटी मौजूदा सामाजिक परिवेश का आईना भी है। जिसमें सामाजिक व्यवस्था और अधिकारों का समावेश होता है। हमारे समाज में गर्भधारण और मातृत्व का खास महत्व है जिसमें ज़्यादा ज़िम्मेदारी का बोझ औरत पर आता है। निसंतान दम्पत्ति अक्सर एक हीन भावना के साथ जीते हैं कि उन्होंने अपनी सामान्य और अपेक्षित भूमिका का निर्वाह नहीं किया है। इस असफलता का दोष औरत पर डाला जाता है क्योंकि सदियों से माना जाता है कि प्रजनन की ज़िम्मेदारी और दायित्व उसका है। निसंतान होना एक सामाजिक संकट बनकर महिला के वजूद पर सवाल खड़ा करता है। प्रजनन की इस सामाजिक महत्ता के कारण यह अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि औरतें बच्चा गोद लेने के बजाय एआरटी का सहारा क्यों लेती हैं?

जागोरी

एआरटी तकनीकें अनुर्वरता के उपचार के रूप में भी सामने आती हैं। निसंतान होने का चिकित्साकरण और इसे एक बीमारी की तरह देखने का नज़रिया गर्भधारण की क्षमता और अक्षमता दोनों के व्यवसायिकता के पीछे भी काम करता है। हालांकि एआरटी में चिकित्सकीय भाषा और तकनीकी प्रक्रियाओं का उपयोग होता अनुर्वरता के कुछ प्रमुख कारण जैसे प्रदूषण, तनाव, पेड़ू की बीमारियों आदि को इसमें नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है।

एआरटी को बढ़ावा अनुर्वरता की बदलती परिभाषा से भी मिलता है। निर्देश के अनुसार अनुर्वरता का अर्थ है "बिना किसी गर्भ निरोध के एक साल तक यौन संबंध के बाद भी गर्भधारण में असफलता"। 1975 से पहले यह एक वर्ष की सीमा पांच साल की थी। इस सिमटती सीमा से चिकित्सा संस्थानों और वैज्ञानिक दावेदारों को बल मिलता है और वे प्रजनन में हस्तक्षेप करने की वैधता हासिल कर पाते हैं।

एआरटी विवाद में अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें महिलाओं को ही नज़रअंदाज़ किया जाता है। नित नई तकनीकों में सुरक्षा पर ध्यान नाममात्र का होता है और महिलाएं इन तकनीकी प्रयोगों में 'गिनी पिग' बनकर रह जाती हैं। महिलाओं के लिए इनका प्रयोग और यह उपचार प्रक्रिया, मानसिक तनाव, हताशा, निराशा और आशा के उतार-चढ़ाव चिकित्सा विज्ञान की आधुनिकता में लेकर आती है। महिलाओं के विचार से यह एक 'ट्रायल व एरर साईंस' (तुक्के वाला) प्रयोग है जिनमें सौ प्रतिशत सफलता की कोई गारंटी नहीं होती।

जहां तक एआरटी उपचार के विषय में जानकारी का सवाल है तो डॉक्टर और महिलाएं दोनों का मत है कि इसके बारे में कोई खास, स्पष्ट जानकारी औरत को नहीं दी जाती। डॉक्टर सिर्फ कुछ मामूली दुष्परिणामों की जानकारी देते हैं। गंभीर नतीजे जैसे गर्भाशय का ऐंठना आदि के बारे में नहीं बताया जाता। एआरटी केन्द्रों में अधिकांश समय उपचार प्रक्रिया का खर्च, सफलता और कुछ परहेज़ के बारे में बताया जाता है। यानि जो भी जानकारी दी जाती है वह बहुत कम व आधी-अधूरी होती है। चिकित्सा विज्ञान की मर्यादा का पालन करके मरीज़ को जानकारी युक्त निर्णय लेने में कोई मदद नहीं की जाती।

एआरटी तकनीक का औरतों की दिनचर्या, काम और यौन संबंधों पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। जांच के लिए भूखे पेट आना, लम्बा इंतज़ार और जटिल परीक्षण एक मानसिक तनाव को बढ़ावा देते हैं। एक तरफ महिलाओं पर गर्भधारण का दबाव रहता है तो दूसरी ओर एआरटी की कुछ प्रक्रियाओं ने यौन संबंधों की 'निगरानी' बढ़ाकर उसकी स्वाभाविकता और निजीपन को खत्म कर दिया है। डॉक्टरों के लिए यौन संबंध एक वैज्ञानिक गर्भधारण की प्रक्रिया मात्र है और इसकी मॉनिटरिंग औरतों को असंवेदनशील और अपमानजनक प्रतीत होती है।

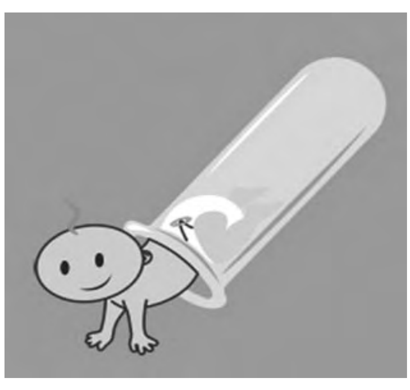

एआरटी उपचार की लागत का भी कोई मानक नहीं है। यह कीमत चुकाने वाले की क्षमता पर निर्भर करता है। अमीरों से इसकी मनमानी कीमत वसूली जाती है और गरीबों के ऊपर उपचार में समझौते और परीक्षण किए जाते हैं। इसके अलावा डॉक्टर जो खर्च बताते हैं उनमें अल्ट्रासाउंड, सलाह शुल्क, दवा, सुई, लैप्रोस्कोपी, जांच-पड़ताल का व्यय शामिल नहीं किया जाता। इलाज की लम्बी प्रक्रिया और गोपनीयता रखने का दबाव बना रहता है सो अलग। इस प्रक्रिया का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू है औरत की सहमति। ऐसे मामलों में अधिकांश समय पुरुष की रज़ामंदी लेने पर ज़ोर दिया जाता है। औरतों से पूछना या उन्हें पूरी तरह जानकारी देकर रज़ामंदी लेने की बहुत कम कोशिश की जाती है।

सवाल यह है कि इन तमाम विरोधाभासों के बावजूद निसंतान दम्पत्ति इन प्रक्रियाओं के लिए सहमत कैसे हो जाते हैं? इसका सीधा जवाब है कि यह एक सामाजिक समस्या का तकनीकी समाधान है जिसकी समाज में मान्यता है। इसके अलावा अपना 'जैविक' बच्चा जनने की चाहत दम्पत्तियों को बाध्य कर देती है। वे गोद लेने के विकल्प के बारे में सोचते नहीं है क्योंकि वह बच्चा अपना खून नहीं होता। एक बच्चे के एवज में तमाम आर्थिक मानसिक, शारीरिक कष्ट झेलना उन्हें कुबूल है। इस पूरी एआरटी पद्धति के पीछे मातृत्व के पहलू को गौरवान्वित किया जाता है। वंश, वैधता, वर्ग के सवाल भी गोद लेने के विषय में अहम हो जाते हैं।

एआरटी तकनीकों की जहां तक सफलता की बात है तो इसमें 'बच्चा घर ले जाने की दर' को नहीं बल्कि प्रत्यारोपण की दर या रासायनिक गर्भधारण जिससे पुष्टि हो जाए कि गर्भ

ठहर गया है, की दर को सफलता का मापदण्ड माना जाता है। डॉक्टरों का मानना है कि गर्भधारण के बाद औरतें अपनी प्रसूति विशेषज्ञ के पास चली जाती है लिहाज़ा उनकी ज़िम्मेदारी खत्म हो जाती है। उन्होंने यह भी कहा कि औरतें अपना ठीक से ख्याल नहीं रखतीं। इन्हीं कारणों के चलते इन प्रक्रियाओं की सफलता 15 से 50 प्रतिशत आंकी जाती है। भारतीय परिवेश में यह सफलता दर अनुमानित करना कठिन है क्योंकि यहां कार्यरत एआरटी क्लिनिक पंजीकृत नहीं है और उनकी सफलता के तयशुदा मानक नहीं हैं।

एआरटी तकनीकें बच्चे के जन्म देने के साथ-साथ मनपसंद सर्वगुण सम्पन्न बच्चे की इच्छा को भी उजागर करती हैं। शुक्राणु-अंडाणु देने वाले और लेने वाले के गुण, रंग-रूप, बाल, सामाजिक हैसियत आदि तमाम बातों पर गौर किया जाता है। कई मामलों में धार्मिक परिपेक्ष्य भी अहम बन जाता है। बच्चे के लिंग का चुनाव भी लाज़िमी और ज़ोर पकड़ता नज़र आता है। यह मानव जीवन के बाज़ारीकरण की सीमा है।

इन तकनीकों में अधिकतर समय एक तीसरे व्यक्ति की भागीदारी होती है जो 'डोनर' कहलाता है। शुक्राणु-अंडाणु देने वाले स्त्री-पुरुष अक्सर गरीब तबके के होते हैं जो पैसों के खातिर प्रदान के लिए राज़ी हो जाते हैं। आर्थिक तंगी के चलते एआरटी गरीबों के शोषण का एक साधन बन सकता है।

आजकल एआरटी क्लीनिक बड़ी संख्या में और तेज़ी के साथ उभर रहे हैं। लेकिन इनकी जांच या नियंत्रण के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाए जा रहे। इनके नैतिक आचरण, सुरक्षा और मर्यादा के पहलुओं पर गौर करना बहुत आवश्यक है। आईसीएमआर ने एआरटी मुद्दे पर एक सीमित दिशा-निर्देश जारी किए हैं पर वह भी समस्याजनक है। इस दिशा-निर्देशों में एआरटी को नसबंदी के लिए लोगों को राज़ी करने का साधन माना गया है। दूसरा, इन दिशा-निर्देशों में सिर्फ़ विवाहित महिलाओं को एआरटी का ग्राहक माना गया है। एकल व समलैंगिक संबंधों का इसमें कोई स्थान नहीं है। इन दिशा-निर्देशों को कानूनी रूप से लागू करने का भी कोई प्रावधान नहीं है।

यह एक चिंता का विषय है कि हमारे देश में एआरटी के मुद्दों पर कोई सुनियोजित कार्यक्रम, कोई विचार-विमर्श मौजूद नहीं है। महिला आंदोलन भी गर्भनिरोधकों और लिंग परीक्षण के मुद्दों पर केन्द्रित है। हालांकि एआरटी विकल्प व्यक्तिगत चुनाव पर आधारित है पर फिर भी इसके सामाजिक, तकनीकी और बाज़ारीकरण के पहलुओं को समझना ज़रूरी है जिससे महिलाओं के शरीर के साथ खिलवाड़ और नियंत्रण की राजनीति पर दबाव बनाया जा सके।

इस लेख की समस्त जानकारी 'एआरटी और महिलाएं, संतानोत्पत्ति में सहायक तकनीकियां', समा-महिला और स्वास्थ्य सन्दर्भ समूह प्रकाशन, पुस्तक से साभार ली गई हैं।
अन्य जानकारी के लिए सम्पर्कः sama.womenshealth@gmail.com

साभारः लाफ़िंग मैटर्स, जागोरी

लेख

स्वावलंबी स्वास्थ्य से अधिकारों तक पहुंच

सबला व क्रान्ति

महिला केन्द्रित स्वास्थ्य सेवा के लिए स्वावलंबन प्रशिक्षण की ज़रूरत समुदाय व महिला आंदोलन में हमारे अनुभवों और भागीदारी से निकली है। हमारा ख्वाब था कि स्वावलंबन प्रशिक्षण के ज़रिए प्रशिक्षणार्थी खुद अपने आप में, अपनी सोच, रवैयों और विश्वासों में तब्दीली ला सकें और जो अंततः समाज के दमनकारी ढांचों, संरचनाओं और तंत्रों में परिवर्तन करने में सक्षम होगा।

हमने पिछले तीन दशकों से भारत तथा दक्षिण एशिया में महिला व स्वास्थ्य मुद्दों पर काम किया है। महिला आंदोलन से जुड़ाव ने इस विषय पर हमारी राजनीतिक समझ को तराशा है। हमारा मानना है कि पितृसत्तात्मक ढांचा विभिन्न स्तरों पर जेंडर, वर्ग, जाति, धर्म के भेदभाव को बरकरार रखने में मदद करता है। विभिन्न स्तरों पर पदानुक्रम को स्थापित करके यह औरतों के जीवन की सच्चाइयों को जटिल बनाता है, खासकर चूंकि औरतें एक से अधिक पहचानों को खुद से जोड़े रखती हैं। यह सत्ता और दमन के रिश्ते सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानताओं और अन्यायों पर आधारित होते हैं; और इनमें औरतों के मूल मानव अधिकारों का परिवार, राज्य व समाज द्वारा लगातार हनन किया जाता है।

वैश्विक पूंजीवाद ने इन पितृसत्तात्मक ढांचों को और अधिक पुख्ता बनाया है जिसके फलस्वरूप सत्ताधारी व गैर सत्ताधारियों के बीच की खाई और चौड़ी हो गई है। विकास के इस परिवेश में औरतों के शरीर का इस्तेमाल उत्पादन व प्रजनन के निहित फायदों और सस्ते श्रमिकों के तौर पर होता है। महिला व स्वास्थ्य के मुद्दे पर काम करते हुए हमने समझा कि औरतों के शरीर पितृसत्तात्मक और पूंजीवादी संरचनाओं के दमन का शिकार हैं। यह नियंत्रण परिवार, शादी, समुदाय और राज्य तंत्रों के माध्यम से किया जाता है। नारीवादी स्वास्थ्य आंदोजन से जुड़े होने की वजह से हमने सरकार की सीमित स्वास्थ्य नीतियों और कार्यक्रमों की तीखी आलोचना की है। औरतों के स्वास्थ्य को संबोधित करने में सरकार की नाकामयाबी, गिरती स्वास्थ्य सुविधाएं तथा सामाजिक कल्याण को नज़रअंदाज़ करती आर्थिक नीतियां इस तथ्य का पुख्ता सबूत हैं कि जब तक स्वास्थ्य सेवाओं को गरीबी और हिंसा पर नियंत्रण के साथ जोड़कर नहीं देखा जाएगा तब तक औरतों के अच्छे स्वास्थ्य की अपेक्षा करना फिजूल है।

स्वावलंबन प्रशिक्षणों का उद्देश्य औरतों के स्वास्थ्य यौनिक अभिव्यक्ति और सतत आजीविका के मसलों को मानव अधिकार के व्यापक पैमाने के तहत समझना था। इन अधिकारों को हासिल करने के लिए महत्वपूर्ण है कि औरतें अपनी शारीरिक व मानसिक सुस्वस्थता की रक्षा कर सकें, अपने दोयम दर्जे पर सवाल उठा सकें तथा खुद को हिंसा से भी बचाकर रख पाएं। इस प्रशिक्षण का यह भी मकसद है कि औरतें और आत्म-छवि व आत्मविश्वास को बरकरार रखें, अपने अनुभवों, ज्ञान और काबलियत को पहचानकर स्वावलंबन कौशल के ज़रिए अपनी सेहत को बेहतर बना सकें। हीलर या रोगहर महिलाओं के साथ अपना नज़रिया बांटने से हमें चिकित्सा शास्त्र में निहित जेंडर वर्ग जाति आधारित भेदभाव, पूर्वग्रहों और धाराओं को जांचने में

मदद की। इसके साथ-साथ प्रशिक्षण से हम उन तमाम पितृसत्तात्मक विचारधाराओं, व्यवहारों और संरचनाओं को भी चुनौती दे पाएं जो पुरुषों द्वारा नियंत्रित हैं और जहां महिलाओं की भावनाओं, श्रम, प्रजनन, यौनिकता व सम्पत्ति का शोषण होता है। इन सभी उद्देश्यों के अलावा इन प्रशिक्षणों में हम स्वास्थ्य को एक मूल अधिकार के रूप में देखते है; स्वास्थ्य का अधिकार पर जिसमें भोजन, पानी, चारा, ईंधन, वेतन, आश्रय तथा हिंसा रहित ज़िन्दगी शामिल हों। इन सभी लक्ष्यों को हासिल करने के लिए हमने रोगहरों को औरतों की मांगों के व्यक्तिगत व सामूहिक सक्रियता व सशक्तता के माध्यम से, सरकारी व सामाजिक जवाबदेही के महत्व को समझाया।

इस लेख में हम स्वावलंबन प्रशिक्षणों के सकारात्मक प्रभावों की समीक्षा आपके साथ बांट रहें हैं जो महिलाओं के स्वास्थ्य व सामुदायिक जीवन को बेहतर बनाने में कारगर साबित हुए हैं। इसके अलावा परिवर्तनशील सामाजिक-आर्थिक सच्चाइयों के सन्दर्भ में इन प्रशिक्षण प्रक्रियाओं से निकली चुनौतियों और पशोपेश को भी इस लेख में रेखांकित किया गया है।

इन प्रशिक्षणों से रोगहर/गुणी महिलाओं में *व्यक्तिगत व व्यावसायिक स्तर पर आत्मविश्वास व आलोचनात्मक जागृति* देखने को मिली है। उनके कौशल, नज़रिए के सशक्तिकरण के कारण परिवार व समुदाय में उनके दर्जे में बढ़ोत्तरी हुई है। अपने व्यक्तिगत जीवन में वे अपनी साथियों से सुरक्षित यौन की मांग रख रही हैं तथा किसी भी रूप में हिंसा झेलने को तैयार नहीं हैं। अपने संगठनों की मदद से इन महिलाओं ने अपनी जानकारी बढ़ाने की दिशा में भी प्रयास किए हैं। अब वे डॉक्टरों व अन्य स्वास्थ्यकर्मियों के साथ आत्म-विश्वास के साथ महिला स्वास्थ्य के मुद्दों पर विचार-विमर्श कर पाती हैं।

महिलाओं की खास समस्याओं पर विशेष ध्यान व महिला सन्दर्भ केन्द्र इन कार्यक्रमों का एक अहम हिस्सा हैं। यहां औरतें अपनी समस्याओं के बारे में खुलकर बातचीत करती हैं, अपना इलाज कराती हैं और दूसरी औरतों के साथ जुड़ती हैं। लगभग 150 महिलाएं हर महीने इन केन्द्रों तक आती हैं जहां उनकी तकलीफ़ों का निदान होता है। रोगहर/गुणी महिलाएं ज़रूरत पड़ने पर रोगी महिलाओं के परिवार के पुरुष सदस्यों से भी बात करती हैं। अगर कोई रोग ऐसा हो जिसका इलाज केन्द्र में सम्भव न हो तो गुणी किसी अन्य संवेदनशील व्यवसायिक डॉक्टर या अस्पताल तक महिलाओं को ले जाती हैं। इस मदद से बहुत सी बीमारियों का शुरूआती स्तर पर इलाज सम्भव हो जाता है।

जड़ी-बूटियों से इलाज इस प्रक्रिया का अहम हिस्सा है। हालांकि औरतों को जड़ी-बूटी इलाज के लिए तैयार करना काफी मुश्किल काम है। पर एक बार इससे फायदा हो जाने पर औरतें लम्बे दौर पर इस इलाज के लिए राजी हो जाती हैं। काफी केन्द्रों पर इन जड़ी-बूटियों को उगाने की भी शुरूआत की गई है। गुणी इन जड़ी-बूटियों को बाज़ार में भी बेचती हैं जिससे केन्द्र के लिए कुछ पैसे इकट्ठे किए जा सकें। इन जड़ी-बूटियों के साथ-साथ व्यायाम, मालिश, एक्यूप्रेशर तकनीकों का भी इस्तेमाल किया जाता है।

औरतों की तकलीफ़ों और उनके निदान की *जानकारी का दस्तावेज़ीकरण* भी इस प्रक्रिया में शामिल है। औरतों की केस हिस्ट्री, उनके इलाज का ब्योरा रखकर उसका समय-समय पर विश्लेषण किया जाता है। इस जानकारी का इस्तेमाल करके पुणे के सद्फुली समूह ने सरकारी अस्पताल के साथ मिलकर क्षेत्र में औरतों की आम बीमारी प्रोलैप्स (भ्रंश) के रोकथाम के लिए जानकारी बांटने व रेफरल व फॉलोअप सेवाओं की शुरूआत के लिए मांग की। अब इस सरकारी अस्पताल के साथ मिलकर औरतों में प्रोलैप्स की शिकायत को काफी हद तक नियंत्रित किया गया है।

गुणी व रोगहर समूह ने *युवा वर्ग के साथ काम* पर भी ज़ोर दिया है। मौजूदा सामाजिक, राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में युवा समूह के बीच में स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों पर जागृति बहुत महत्वपूर्ण है। युवाओं के कार्यक्रमों में यौनिकता, शरीर की जानकारी, उर्वरता, यौन हिंसा व सुरक्षित यौन संबंधों पर जानकारी व सलाह मुहैय्या की जाती है।

इसके साथ ही स्वास्थ्यकर्मियों और व्यवसायिकों के साथ *महिलाओं की समस्याओं पर विचार-विमर्श* आदि पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इस सहयोग से औरतों की दूसरे व तीसरे स्तर की स्वास्थ्य सेवाओं व सुविधाओं तक पहुंच सुनिश्चित की जा सकी है जिससे सार्वजनिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर बेहतर इलाज मुहैय्या हो सके।

कुछ गुणी व रोगहर महिलाएं *प्रशिक्षण देने में भी सक्षम* है। ये अपने स्थानीय समूहों व छोटी संस्थाओं को स्वास्थ्य स्वावलंबन प्रशिक्षण देती हैं। इन प्रशिक्षणों ने समुदाय में इस सोच को फैलाने में मदद की है कि सम्पूर्ण स्वास्थ्य सेवा पाना हर औरत का मूल अधिकार है। अपने समूहों की मदद से औरतों ने पंचायतों पर दबाव डाला है कि वह स्वास्थ्य समितियों का गठन करें तथा गांव में स्वास्थ्यकर्मियों के नियमित रूप से आने की व्यवस्था करें। गुणी/रोगहर समूह जन स्वास्थ्य अभियान व अन्य स्वास्थ्य आंदोलनों से भी जुड़कर काम करते हैं।

इन सभी सकारात्मक प्रभावों के साथ-साथ इन प्रशिक्षणों में हमें कुछ चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। सबसे पहली चुनौती है, *बदलते सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक परिवेश के अनुसार प्रशिक्षण को ढालना।* असमानता, अन्याय और फ़र्क़ों के माहौल में बातचीत, रज़ामंदी और सहयोग को बढ़ावा देना आसान काम नहीं है। इसके अलावा सदियों से चली आ रही सोच और मतों को बदलकर नारीवादी आयामों को प्रचलित करना काफी मुश्किल जान पड़ता है।

दूसरे, हम औरतों के सम्पूर्ण स्वास्थ्य की चाहे जितनी भी बात करें पर यह सच है कि *अधिकतकर समय औरतों की तकलीफ़ें प्रजनन व यौनिक होती हैं।* इसके अलावा अन्य दूसरी स्वास्थ्य समस्याओं को औरतें ज़्यादा गंभीरता से नहीं लेती और उन्हें मामूली व प्राकृतिक मानकर सहती रहती है।

तीसरी चुनौती है, *औरतों में खून की कमी, कुपोषण व कमज़ोरी जिसके कारण वे संक्रमण का शिकार होती हैं।* रोगहर व गुणी महिलाएं उन सामाजिक कारणों को संबोधित नहीं कर पाती जो औरतों के दोयम दर्जे के साथ संबंधित हैं और जिसके चलते यह स्वास्थ्य समस्याएं औरतों को घेरती हैं। सरकार की आर्थिक नीतियां, गरीबी, रोज़गार के घटते मौके एक स्वस्थ समाज की हमारी चाह पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। चौथा, हालांकि स्वावलंबन प्रशिक्षण औरतों को संतोष व सेवा दोनों प्रदान करता है, फिर भी हमारी पुरज़ोर कोशिशों के बावजूद हम *औरतों में नारीवादी चेतना व नज़रिए का विस्तार अधिक नहीं कर पाते।* ज़्यादातर संसाधन सेवा व रोगों के निदान तक केन्द्रित होकर रह जाते हैं। पांचवी चुनौती जो हमारे सामने है, वह है *जड़ी-बूटियों की कमी।* जंगलों की कटाई के कारण काफी जड़ी-बूटियों को हासिल करना रोगहरों के लिए मुश्किल हो रहा है। साथ ही जब औरतें किसी रोग के अंतिम चरण में हमारे पास इलाज के लिए आती हैं तब जड़ी-बूटियों से पूरा इलाज करना संभव नहीं होता। छठी, इन प्रशिक्षणों से हमारी कोशिश यह भी होती है कि *रोगी खुद प्रशिक्षण हासिल करने के बाद अपना इलाज कर पाए।* पर ऐसे कम ही केस देखने को मिले हैं जहां प्रशिक्षण के ज़रिए रोगहर व गुणी महिलाएं स्वास्थ्य समस्याओं से जूझने में पूर्णतः सक्षम हो जाएं। सांतवी चुनौती है कि *प्रशिक्षण व प्रशिक्षित महिलाएं अभी तक हिंसा को एक सार्वजनिक स्वास्थ्य का मुद्दा नहीं मानतीं।* वे औरतों के मानसिक व शारीरिक रोगों को परिवार व समाज के दमन और शोषण के साथ जोड़कर पूरी तरह नहीं देखतीं। शायद हम प्रशिक्षकों को उनसे कुछ ज़्यादा ही उम्मीदें हैं। हम यह भूल जाते हैं कि ये गुणी/रोगहर महिलाएं भी उसी परिवेश में पली-बढ़ी हैं और इससे बाहर निकलने में काफी समय लग सकता है।

इन तमाम चुनौतियों के अलावा प्रशिक्षक होने के नाते हमें भी कुछ खास मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। अधिकांश समय हमारे प्रशिक्षण का रूप बदलता है क्योंकि समूह चाहते हैं कि प्रशिक्षण कम समय का हो या फिर इसे दस-दस दिनों के तीन हिस्सों में बांटकर किया जाए। समूह यह भी अपेक्षा करते हैं कि हमारे पास पके-पकाए तैयार जवाब होंगे। इस कार्यक्रम को नियमित रूप से चलाने के लिए मानव व आर्थिक संसाधनों की भी कमी महसूस होती है। रोगहर/गुणी महिलाओं को सहयोग देने वाली संस्थागत ढांचों की भी कमी खलती है। एक बार जब औरतों सशक्त व जागृत हो जाती हैं तब संस्थाओं में उनके आत्मविश्वास और दबंगता से अन्य लोगों को परेशानी महसूस होती है।

इस सबके बाबजूद हम इन स्वावलंबन प्रशिक्षणों के प्रति प्रतिबद्ध हैं। इन प्रशिक्षणों ने हमारे जीवन में काफी सकारात्मक प्रभाव डाले हैं। रोगहर व गुणी महिलाओं के साथ काम करके हमने बहुत कुछ सीखा है। उनके परोपकार, ज्ञान, साहस व अनुभवों से हमने औरतों को सम्पूर्ण स्वास्थ्य तक ले जाने के सपनों को साकार करने की कोशिश की है।

हिंसा व स्वास्थ्य : जागोरी की पहल

मधु

यूं तो कहा जाता है कि स्वस्थ जीवन हर इन्सान का मूलभूत अधिकार है परन्तु वास्तविकता यह है कि भारत में इस मूल मानव अधिकार का उल्लंघन एक आम स्थिति है। खासतौर से महिलाओं व बच्चों के स्वास्थ्य की गिरती स्थितियां गहरी चिन्ता का विषय हैं। महिलाओं के गिरते स्वास्थ्य के मुख्य कारणों में है — गरीबी, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच, सुविधाओं का उपलब्ध न होना व जेंडर असमानता। जेंडर असमानता परिवार से लेकर सरकारी स्वास्थ्य नीतियों तक झलकती है। परिवार में अच्छी औरत की छवि यही है कि पहले वह परिवार की सेवा करे और सबसे आखिर में अपनी आवश्यकताओं के बारे में सोचे। परन्तु वास्तविकता में अच्छी औरत बनने में औरतें खुद को कहीं खो देती हैं व अपने स्वास्थ्य को नज़रअंदाज़ कर देती हैं।

जेंडर आधारित गैरबराबरी की सामाजिक व्यवस्था में काम का बंटवारा, बहुआयामी काम का बोझ, घरेलू काम की ज़िम्मेदारी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ शादी व बच्चे पैदा करना आदि कारणों का महिलाओं के गिरते स्वास्थ्य से गहरा संबध है।

समाज व परिवार में दोयम दर्जे पर होने के कारण औरत की सेहत पर ध्यान नहीं दिया जाता। कमरदर्द, कमज़ोरी व सरदर्द जैसी तकलीफ़ें आम मानी जाती हैं जबकि ये सभी काम के बोझ, आराम न मिलने व काम के तरीकों से सम्बन्धित हैं। अपने शरीर के प्रति झिझक, ग्लानि और शर्म से अधिकतर महिलाएं अपनी बीमारी के बारे में समय से व खुलकर बात नहीं करतीं जिससे बीमारी बढ़ती जाती है। इसके साथ-साथ मानसिक तनाव भी स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण विषय है।

जिस समाज में संस्कृति के नाम पर औरत यह तय करने का हक़ न रखती हो कि क्या पकाए और कितना पकाए वहां उसका खुद अपनी खुराक पर नियत्रंण क्या होगा? वैसे भी वह सबसे अंत में बचा-खुचा खाना ही खाती है। इस कारण से अधिकांश औरतें जीवन भर ज़रूरत से कम पोषण पाती हैं जिससे वे खून की कमी पोषण और कुपोषण का शिकार होती हैं। हमारे देश में लगभग 70 प्रतिशत महिलायें कुपोषण व अनीमिया की शिकार हैं। 2001 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार गिरता स्त्री-पुरुष अनुपात, अत्याधिक ऊंची जच्चा-बच्चा मृत्यु-दर व महिलाओं की कम औसत आयु, कुछ ऐसे ठोस प्रमाण है जो गौर करने योग्य हैं।

सरकारी स्वास्थ्य नीतियों पर नई आर्थिक नीतियों का भी गहरा असर पड़ता है। हर पांच साल पर सरकार स्वास्थ्य नीतियां तय करती है। आजकल तो नई आर्थिक नीतियों पर भूमंडलीकरण की छाया है। सारा विश्व व्यापार का केन्द्र बन रहा है। नई आर्थिक नीति, हर क्षेत्र में केन्द्रीयकरण व निजीकरण को बढ़ावा दे रही है जिससे सरकार की स्वास्थ्य सेवाओं में भूमिका संकुचित होती जा रही है। स्वास्थ्य का निजीकरण होने के कारण आज जनता अच्छी स्वास्थ्य सेवाओं का

लाभ नही उठा पाती है। हालांकि आज भी भारत में 70 प्रतिशत लोग इलाज के लिए सरकारी अस्पतालों की और जाते हैं क्योंकि यहीं पर उन्हें मुफ्त इलाज मिलने का प्रावधान है। 300 के करीब भारतीय औरतें रोज़ाना प्रसव के दौरान या गर्भावस्था संबंधी कारणों से मर जाती हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ विकास कार्यक्रम 2001 के तहत भारत में सिर्फ़ 50 प्रतिशत गांवो में ही किसी न किसी प्रकार का सरकारी स्वास्थ्य केंद्र है और ये वह इलाके हैं जिनमें 10 प्रतिशत से कम लोग रहते हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण 1995 के आंकड़ों के अनुसार सिर्फ़ 42 प्रतिशत प्रसव स्वास्थ्यकर्मी की देखरेख में होते हैं। इन तथ्यों से पता चल जाता है कि सरकार स्वास्थ्य नीतियां त्रुटिपूर्ण हैं।

महिलाओं के साथ होने वाली पारिवारिक हिंसा औरत के शारीरिक, भावनात्मक व मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। लगातार ताने, गाली, अपमान, तनाव व भेदभावपूर्ण व्यवहार औरतों को गंभीर परिस्थियों में ले आता है, यहां तक कि औरतें अपना मानसिक संतुलन तक खो देती हैं। हिंसा को औरतें अपनी नियति मान लेती हैं क्योंकि बचपन से उनके आसपास का परिवेश कुछ इस तरह का होता है जिसमें सिखाया जाता है कि सहो और चुप रहो। इसके अलावा अच्छी औरत बनने का एक सामाजिक दबाव भी होता है।

इसी अच्छी औरत की भूमिका को निभाते हुए जब वह अस्पताल आती है तो उसकी खामोशी असलियत बयान नहीं करती। उनकी बीमारी का अधिकांश कारण उनकी घरेलू परिस्थितियां होती हैं। कभी वह जली होती है, तो कभी शारीरिक रूप व मानसिक रूप से बीमार होती है। वह डॉक्टर को सही कारण नहीं बता पाती क्योंकि आमतौर पर महिलाएं यही जानती हैं कि अस्पतालों में 'बीमारियों' का इलाज किया जाता है।

'जागोरी' महिला हिंसा पर सतत रूप से काम कर रही है। हमारा मानना है कि हिंसा और महिलाओं के स्वास्थ्य के बीच एक गहरा संबंध है। जब एक औरत इलाज के लिए अस्पताल आती है तो वहां उसकी शारीरिक चोट का इलाज होता है। पर अधिकांश समय डॉक्टर नर्स व अन्य कर्मचारी उसकी शारीरिक चोट के पीछे छिपे पारिवारिक कारणों को संबोधित करने का प्रयास नहीं करते। और तो

और औरत के हालात को लेकर एक संवेदनशील रवैया भी अधिकांश अस्पतालों व स्वास्थ्यकर्मियों में देखने को नहीं मिलता।

इसी सोच को लेकर जागोरी ने दिल्ली शहर के अस्पतालों में स्वास्थ्यकर्मियों के साथ कार्यक्रम शुरू करने का निर्णय लिया है। जागोरी का मानना है कि अस्पतालों में इलाज के लिए आने वाली महिलाओं के प्रति स्वास्थ्य कर्मचारियों के संवेदनशील रवैए को विकसित करने के लिए ठोस कदम उठाने की ज़रूरत है। अस्पताल एक ऐसी जगह है जहां एक रोगी जीवन की उम्मीद लिए आता है। हिंसा से जूझती महिला भी यहां अपने इलाज व तसल्ली की आशा लिए आती है। अगर हम चाहते हैं कि वह स्वस्थ होकर वापस जाए तो शरीर के साथ-साथ उसके मन पर मरहम लगाना भी ज़रूरी है। ऐसा तभी हो सकता है जब डॉक्टर, नर्स व सेवादाताओं का नज़रिया संवेदनशील और ढाढ़स बंधाने वाला हो, एक निर्णायक या इल्ज़ाम लगाने वाला नहीं। इस प्रयास को सफल बनाने के लिए व्यावसायिक व गैर व्यावसायिक कर्मचारियों का जेंडर प्रशिक्षण किया जाएगा। अस्पताल में एक महिला हिंसा के मुद्दे पर कार्यरत काउंसिलिंग सेल शुरू करने का भी प्रयास है।

हमें उम्मीद है कि इन प्रयासों से हम स्वास्थ्य तंत्र को महिलाओं के प्रति संवेदनशील बनाने व महिला हिंसा पर जन जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य को पूरा कर पाएंगे।

स्वस्थ तन, स्वस्थ मन, स्वस्थ हम

जुही जैन

हमने अक्सर औरतों को कहते सुना है, "हमें तो व्यायाम करने की ज़रूरत ही नहीं है। हमारी वर्ज़िश तो घर का काम करके ही हो जाती है।" या फिर, "घर के काम से दो घड़ी छुट्टी मिले तो उसमें भी व्यायाम करके थक जाएं।" "व्यायाम की ज़रूरत तो पुरुषों को होती है, औरतें तो अपने आप ही फिट रहती हैं।" पर यह सब धारणाएं सही नहीं हैं।

व्यायाम की आवश्यकता पुरुषों और स्त्रियों दोनों को होती है। यह हमारे अच्छे स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। फिर चाहे हम योगासन करें, सुबह अथवा शाम की सैर करें, सीढ़ियों पर व्यायाम करें, रस्सी कूदें या कोई खेल खेलें। व्यायाम हम औरतों के लिए उतना ही ज़रूरी है जितना खाना, सोना या सांस लेना। आइए, थोड़ा समझने का प्रयास करें कि व्यायाम करने से हमें क्या फायदे हो सकते हैं?

आजकल वक्त बहुत तेज़ी से बदल रहा है। औरतें घर और बाहर दोनों का काम बखूबी संभालती हैं। लिहाज़ा शारीरिक ताकत के साथ-साथ स्टैमिना और आंतरिक मज़बूती भी बहुत ज़रूरी है। जब हम बच्चे थे तो अक्सर खेलकूद कर वर्ज़िश कर लेते थे। पर जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है और घर तथा नौकरी का बोझ बढ़ता जाता है वैसे-वैसे हम अपने शरीर व स्वास्थ्य के प्रति एक बेरुखी अपना लेते हैं। हमें लगता है कि व्यायाम हम तभी करें जब कोई तकलीफ़ हो या फिर इसकी सलाह कोई डॉक्टर दे। पर वास्तव में अगर हम रोज़ आधा घंटा व्यायाम करें तो बहुत सी बीमारियों और तकलीफ़ों से छुटकारा पा सकते हैं।

हमने कई बार देखा है कि हमारा सांस फूल जाता है या फिर हम बोझ नहीं उठा पाते। हमारे हाथ-पैर लचीले नहीं लगते। यानि हम सिर्फ़ वही कर पाते हैं जिसकी इजाज़त हमारा शरीर दे। पर व्यायाम करने का सबसे बड़ा फायदा है कि हम अपने शरीर को बता सकते है कि हम क्या करना चाहते हैं। व्यायाम हमारी मांसपेशियों को मज़बूती प्रदान करता है, हमारे जोड़ों का लचीलापन बनाए रखता है जिससे शरीर स्वस्थ रहता है। इसका अर्थ यह भी हुआ कि जब हम थोड़ा अधिक थकाने वाला कोई काम करें तो हमें तकलीफ़ न हो। व्यायाम हमारी रोज़मर्रा के काम करने की क्षमता को बढ़ाता है जिससे दिन के अंत में हमें थकान और ऊर्जा की कमी महसूस नहीं होती। इससे हमारी मुद्रा (पोस्चर) भी बेहतर होती है जिससे पीठ दर्द और रीढ़ की बीमारियों से निजात मिलती है। हमने पाया है कि जो औरतें खेल-कूद में हिस्सा लेती हैं उन्हें माहवारी से जुड़ी परेशानियां कम होती हैं।

जब हमारा शरीर स्वस्थ और चुस्त रहता है तो हम खुद को ज़्यादा संतुलित महसूस करते हैं। शरीर में तनाव भी कम होता है। दिल, दिमाग और शरीर में एक जुड़ाव होता है जिससे हमें नींद भी अच्छी आती है। हम कई बार खुद को न चाहते हुए ऐसे काम करने से रोकते हैं जो हमें लगता है हम नहीं कर पाएंगे। हम कोशिश करने

में भी हिचकिचाते हैं। पर जब हम मानसिक व शारीरिक रूप से फिट महसूस करते हैं तो उत्साह के साथ सब करने का प्रयास करते हैं।

उम्र बढ़ने के साथ-साथ औरतों का वज़न बढ़ने की शिकायत आमतौर पर होती है। वज़न बढ़ने का एक मुख्य कारण है हारमोन परिवर्तन और क्षीण मांसपेशियों में गिरावट जिससे शरीर के उपापचय स्तर (मेटाबॉलिक रेट) में कमी आती है। पर जो महिलाएं निरन्तर चुस्त रहती हैं उनको वज़न बढ़ने की शिकायत कम रहती है। उम्र के बढ़ने से हड्डियों का घनन भी काम होता है जिससे उनमें कैल्शियम व अन्य खनिज पदार्थों की कमी हो जाती है। ऐसी हड्डियां नाज़ुक हो जाती हैं। पर फिटनेस पर ध्यान देकर इस प्रक्रिया को रोका जा सकता है या कम किया जा सकता है। निरन्तर व्यायाम करने से हमारे खून का संचार बेहतर बनता है जिससे दिल पर दबाव कम पड़ता है, रक्तचाप भी नियंत्रित होता है। कहने के मायने ये हैं कि फिटनैस या शरीर की दुरुस्ती हमारे जीवन पर सकारात्मक प्रभाव डालती है। हमारा आत्म-विश्वास बढ़ाकर यह हमें खुशी देती है।

फिट या दुरुस्त रहने के लिए तीन मुख्य पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है। तितिसा (स्टैमिना), ताकत (स्ट्रैन्थ) व लचीलापन (सपलनैस)। स्टैमिना बढ़ाने से हमारा मतलब है कोई ऐसा व्यायाम करना जिससे हमारे दिल की धड़कन तेज़ हो और रक्त संचार बढ़े। तैरना, साइकिल चलाना या एरोबिक इस श्रेणी के व्यायाम हैं। इस व्यायाम में हमारी मांसपेशियां ज़्यादा ऑक्सीजन इस्तेमाल करती हैं जिससे हमारा स्टैमिना बढ़ता है। ताकत या स्ट्रैन्थ बढ़ाने के लिए छोटे समय की तीव्र गतिविधियां जैसे दौड़ना, वज़न उठाना फायदेमंद हैं। इस व्यायाम से हमारी मांसपेशियों की ताकत बढ़ती है जिससे शरीर में ऊर्जा का संचार होता है। इससे हम अपने दिन भर के काम स्वतंत्रता और कम मेहनत से कर पाते हैं। फिट रहने का तीसरा पहलू है अपने शरीर का लचीलापन बढ़ाना जिससे हमारे जोड़ मज़बूत व लचीले हों। योगासन इसके लिए सबसे बेहतर उपाय है।

पर फिटनैस का अर्थ सिर्फ़ शारीरिक स्वस्थता ही नहीं है। मानसिक स्वास्थ्य इसका अहम हिस्सा है। स्वस्थ तन में ही स्वस्थ मन का वास होता है। मानसिक व्यायाम करने का एक बेहतरीन तरीका है एकाग्रता, ध्यान या मेडिटेशन।

नियम से व्यायाम करने के कुछ खास फ़ायदेः

- हृदय रोगों व कैंसर की संभावना कम होती है
- डायबिटीज़ का खतरा कम रहता है
- असामयिक मृत्यु की संभावना कम होती है
- तनाव में कमी
- डिप्रेशन, घबराहट पर नियंत्रण
- मनोवैज्ञानिक व मानसिक स्वास्थ्य का विस्तार
- स्वस्थ हड्डी, मांसपेशी व जोड़
- वजन का नियंत्रण व मोटापे में कमी
- उच्च रक्तचाप, हाईपरटेंशन जैसी तकलीफ़ों में रोकथाम

इन सभी तकनीकों से आंतरिक शक्ति ऊर्जा और संयम बढ़ता है। अगर आप दस मिनट चुपचाप शांत बैठें या एकटक किसी चीज़ या बिन्दु को निहारें तो आप पाएंगी कि आपका दिमाग तनावमुक्त हो गया है। मन में शांति और तसल्ली का एहसास होता है।

अब सवाल है कि हम व्यायाम या एक्सरसाइज़ की शुरुआत कैसे और कहां से करें? इसके लिए वक्त कब निकालें? सबसे पहले यह ज़रूरी है कि आप अपने डाक्टर से सलाह लें खासकर अगर आपको स्वास्थ्य समस्याएं जैसे हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, कैंसर या फिर कोई अन्य बीमारी हो। अगर आप गर्भवती हैं तो भी अपनी डाक्टर से बातचीत कर लें।

आप कौन से व्यायाम या गतिविधि करना चाहती हैं यह आप पर निर्भर करता है। घूमने जाना, जॉगिंग, रस्सी कूदना, सीढ़ियां चढ़ना-उतरना, बगीचे में काम करना, नृत्य आदि कुछ ऐसी क्रियाएं है जो फायदेमंद हैं। इसके अलावा योगासन, तैराकी, साईकिल चलाना या फिर कोई खेल जैसे फुटबाल, टेनिस, बेडमिंटन आप कुछ भी कर सकती हैं। सबसे ज़रूरी है कि आप वह गतिविधि करें जो आपको अच्छी लगती हो व आपकी जीवन शैली के मुताबिक हो। यानी अगर आप दिन भर बैठने वाला काम करती हैं तो कुछ ऐसी

क्रिया चुनें जो चलने-फिरने वाली हो। अगर आप दिन भर घूमती-फिरती हों तो शरीर को लचीला बनाने और आराम देने वाले व्यायाम चुनें। हममें से कई लोगों को अपने घर में व्यायाम करना पसंद होता है और इसमें आसानी भी होती है। पर कई लोग घर के बाहर पार्क, मैदान या व्यायामशाला जाना पसंद करते हैं। जैसी सुविधा हो वैसा करें। इसके लिए कोई तय नियम नहीं है। व्यायाम की शुरूआत आप अकेले और चाहें तो किसी दोस्त, सहेली, परिवार के सदस्य के साथ करें। यह भी बहुत ज़रूरी है कि आप अपनी सीमा पहचानें। अगर आपने बहुत समय तक कुछ व्यायाम या गतिविधि नहीं की है तो पहले ही दिन आप सब कुछ नहीं कर सकेंगी। धीरे-धीरे आपका शरीर लचीला बनेगा और तब आपको ज़्यादा मज़ा आएगा। आप हताश न हों, न ही खुद से ज़्यादा ज़ोर-जबर्दस्ती या उम्मीद रखें।

व्यायाम की शुरूआत धीरे-धीरे करें। पहले दिन से ही लगातार एक घंटा व्यायाम करने से आप काफी थक सकती हैं। पहले आधा घंटा ही काफी है, फिर धीरे-धीरे समय बढ़ाएं। इसके अलावा कोई भी व्यायाम या गतिविधि शुरू करने से पहले 'वार्म अप' यानि हाथ-पैर, गर्दन-पंजों की हल्की वर्ज़िश ज़रूरी है जिससे मांसपेशी खिचें और खुलें। ऐसा करने से स्टैमिना व लचीलापन दोनों बढ़ता है तथा व्यायाम करते समय चोट का खतरा नहीं होता। पहले कुछ दिन आपके शरीर में अकड़न और दर्द महसूस होगा। इसी तरह व्यायाम खत्म करने पर आप कुछ देर आराम करें। इससे आपकी बढ़ी हुई धड़कन नार्मल हो जाएगी। अगर आप किसी ठंडी या गर्म जगह में व्यायाम करें तो तुरन्त एयर कंडीश्नर या हीटर के सामने न बैठें, न नहाने जाएं। शरीर का तापमान नार्मल होने का इन्तज़ार करें। पर इससे घबरा कर व्यायाम बंद न करें। यह स्वभाविक है और जल्दी ही आपका शरीर व्यायाम, खेलकूद या आसन का अभ्यस्त हो जाएगा। पर व्यायाम या खेलते समय अगर आपको चक्कर, उल्टी या घबराहट होने लगे तो फौरन रुक जाएं।

याद रखें कि व्यायाम या जो भी गतिविधि आप कर रही हों उसमें आपको मज़ा आए। वह आपके लिए बोझ या तनाव का कारण न बने। इसके अलावा यह भी ध्यान रखें कि एक ही चीज़ रोज़ाना करने से बोरियत महसूस हो सकती है। इसलिए अगर आप चाहें तो अपने व्यायाम में परिवर्तन लाएं। एक दिन घूमने जाएं, दूसरे दिन खेले-कूदें, तैरें या फिर साईकिल चलाएं। पर अगर आप कुछ दिन लगातार एक ही चीज़ करना चाहती हैं तो वहीं करें।

व्यायाम करने का कोई निश्चित समय नहीं होता। अधिकतर लोग सुबह का वक्त ध्यान, योगासन या घूमने के लिए उपयुक्त पाते हैं। पर कई औरतों को शाम ज़्यादा उपयुक्त लगती है। तो कहने का मतलब है कि आप अपनी सुविधानुसार कोई भी समय चुनें। बस ध्यान रखें कि व्यायाम करने से पहले और बाद में आप खूब पेट भर भोजन न करें। व्यायाम और भोजन के बीच कम से कम दो घंटे का अंतर होना ज़रूरी है। इसका कारण यह है कि पेट और आंतों को खाना पचाने के लिए अधिक खून की लगातार सप्लाई की ज़रुरत होती है। जब हम कोई शारीरिक क्रिया करते हैं तो यही खून की सप्लाई मांसपेशियों की ओर मुड़ जाती है। इसलिए खाना पचाने की प्रक्रिया व मांसपेशियों में खून की सप्लाई बंट जाती है जिससे दोनों ही प्रक्रियाएं सुचारु रूप से नहीं हो पातीं।

व्यायाम या खेलकूद के लिए उपयुक्त कपड़े और जूतों का भी विशेष महत्व है। कपड़े ढीले और हवादार हों। अगर सूती या ऐसे कपड़े हों जो पसीना सोख लें तो बेहतर है। साथ ही जूते आरामदायक हों जिससे आपको कोई तकलीफ़ न हो। भागने, चलने और जॉगिंग के लिए गद्देदार तले वाले जूते ज़्यादा ठीक रहते हैं।

इसके अलावा आम प्रचलित धारणाओं से बचें। औरतें यह-वह नहीं कर सकतीं। उनके लिए क्या बेहतर है इसकी मुफ्त सलाह देने वाले कई लोग आपको मिलेंगे। आप अपने मन से यह वहम निकाल दें कि एक औरत होने के नाते कोई व्यायाम, खेलकूद, लिबास या व्यवहार ऐसा है जो ठीक नहीं है। आप सब कुछ कर सकती हैं।

अच्छे व्यायाम के साथ संतुलित और पोषक आहार भी ज़रूरी है जिसमें हरी पत्तेदार सब्ज़ियां, फल, दालें भी शामिल हों। आप अच्छा पकाएं और साथ ही अच्छा खाएं। औरतों का कम और कुछ भी खा लेने से गुज़ारा हो जाता है यह धारणा गलत है। व्यायाम के साथ हमें पौष्टिक और संतुलित भोजन ही हमें हमारे सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की ओर ले जाएगा।

ऑर बॉडीज़, ऑरसेल्व्ज़

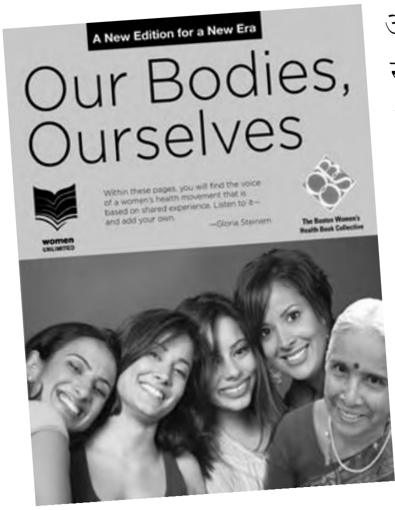

ऑर बॉडीज़, ऑरसेल्व्ज़ सबसे पहले 1970 में बॉस्टन विमेंस बुक कलैक्टिव द्वारा प्रकाशित की गई थी। यह किताब महिलाओं के लिए एक पूर्ण संदर्भ सामग्री है जिसका इस्तेमाल स्वास्थ्य से जुड़ी जानकारियां पाने के लिए औरतें, स्वास्थ्य अधिकार कार्यकर्त्ता व नारीवादी सभी समान रूप से करते हैं। 1984 में पुनः प्रकाशित यह किताब बॉस्टन हैल्थ कलैक्टिव से जुड़ी महिलाओं के सामूहिक अनुभवों से उपजी थी। इन महिलाओं ने महसूस किया था कि चिकित्सीय तंत्र द्वारा मुहैया जानकारी न सिर्फ़ त्रुटिपूर्ण थी बल्कि बरगलाने वाली भी थी, जिसके नतीजतन महिलाओं के स्वास्थ्य अधिकार व अपने शरीर पर उनका नियंत्रण धीरे-धीरे खत्म हो रहा था। सन् 2005 का प्रकाशन इस पुस्तक का एक प्रमुख संशोधनात्मक अंक था जो महिलाओं के स्वास्थ्य से जुड़ी मौजूदा सच्चाइयों को मद्देनज़र रखकर लिखा गया था।

महिला स्वास्थ्य के आंदोलन दक्षिण एशियाई स्तर पर प्रभावशाली योगदान तथा महिला स्वास्थ्य पर भारी मात्रा में प्रशिक्षण व पठन सामग्री होने के बावजूद, यहां पर शिक्षित और जागृत महिला के लिए स्वास्थ्य और यौनिकता पर सही जानकारी का अभाव है। गैर-तकनीकी सामग्रियां अधिकतर या यह कहें पूर्ण रूप से गर्भावस्था व प्रजनन पर केंद्रित हैं जबकि व्यापक मुद्दों से जुड़ी सामग्री गैर-तकनीकी पाठकों को हतोत्साहित करती है। दूसरी ओर स्व-सहायता सामग्रियां हालांकि रोचकता से लिखी गई हैं पर वैज्ञानिक मानकों की कसौटी पर वे आलोचना के योग्य हैं।

महिला स्वास्थ्य आंदोलन, औरतों के स्वास्थ्य से जुड़े मुद्दों को आम लोगों के सामने ले जाने की चुनौती से भी लगातार जूझ रहा है। इसके साथ-साथ सभी वर्ग व पृष्ठभूमि से आई औरतों को अपनी व अपने समुदाय की अच्छी सेहत के राजनैतिक पहलुओं से जोड़ने के लिए प्रोत्साहन व सशक्तता प्रदान करना भी आंदोलन का अहम मुद्दा है। *ऑर बॉडीज़, ऑरसेल्व्ज़* ने दक्षिण एशियाई नारीवादियों को शरीर तथा उसकी क्रियाओं के बारे में मूल जानकारी प्रदान कर, स्वास्थ्य सुविधा तंत्र का राजनैतिक विश्लेषण तथा स्व-सेवा व स्व-सहायता से जुड़ी इस्तेमाल योग्य जानकारी मुहैय्या कराकर इस कमी को पूरा किया है।

जून 2008 में इस किताब का दक्षिण एशियाई संकलन, विमेन अनलिमिटेड, जो एक नारीवादी प्रकाशन है, द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। इस प्रकाशन का मूल ढांचा और रूपरेखा प्रारंभिक अंक जैसी ही है। पर इस दक्षिण एशियाई संकलन में इस क्षेत्र की महिलाओं के लिए उपयुक्त संदर्भ व आधुनिक जानकारी शामिल की गई है। किताब के कुछ विशेष हिस्सों को भारतीय व दक्षिण एशियाई संदर्भ के अनुसार संशोधित किया गया है। इसके अलावा महिला आंदोलन द्वारा स्थानीय मुद्दे जैसे खतरनाक गर्भनिरोधक, एड्स, घरेलू हिंसा आदि के ख़िलाफ़ चलाए गए अभियान भी इसमें जोड़े गये हैं। नई जानकारी और संशोधन का काम महिला स्वास्थ्य की जानकारी और अनुभव रखने वाले सम्पादक द्वारा किया गया है तथा महिला स्वास्थ्य आंदोलन से जुड़े मुख्य सदस्यों ने इसकी समीक्षा की है।

इस संकलन का उद्देश्य है महिला स्वास्थ्य से जुड़े सार्वजनिक विमर्श में कुछ महत्वपूर्ण विचारों का परिचय। औरतें बड़ी संख्या में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता, स्वास्थ्य उपभोक्ता व अपने परिवारों व समुदाय के स्वास्थ्य से जुड़े फैसलों में एक विशेष भूमिका अदा करती हैं। पर नीति निर्धारण और

प्रभावशाली भूमिकाओं में उनका प्रतिनधित्व नाम मात्र ही है। जीवन से जुड़ी नार्मल क्रियाओं जैसे गर्भावस्था, बुढ़ापा, मृत्यु व रजोनिवृत्ति को रोगविज्ञान व रोग आधारित नज़रिए से देखने वाली मौजूदा सोच स्वास्थ्य और स्वास्थ्य तंत्र को सम्बोधित करने के लिए सही नहीं है। औरतों को अधिकार है कि वह उन चिकित्सीय गतिविधियों से जुड़े विवादों और मुद्दों के बारे में जानें जिन पर विशेषज्ञों की सहमति है। वे चाहें तो खुद अपनी स्वास्थ्य विशेषज्ञ बन सकती हैं। अपनी महिला पाठकों और इस किताब को इस्तेमाल करने वाली महिलाओं को जानकारी युक्त स्वास्थ्य उपभोक्ता बनाकर हम उम्मीद करते हैं कि वे सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण योगदान देंगी।

प्रतियां मंगवाने के लिए संपर्क करें:

विमेन अनलिमिटेड
के-36 हौज़ खास इनक्लेव, नई दिल्ली-110016
दूरभाष: 011-26524129/26964947
*ईमेल: **womenunltd@vsnl.net***

जानकारी स्रोत: विमेन अनलिमिटेड

◆◆◆

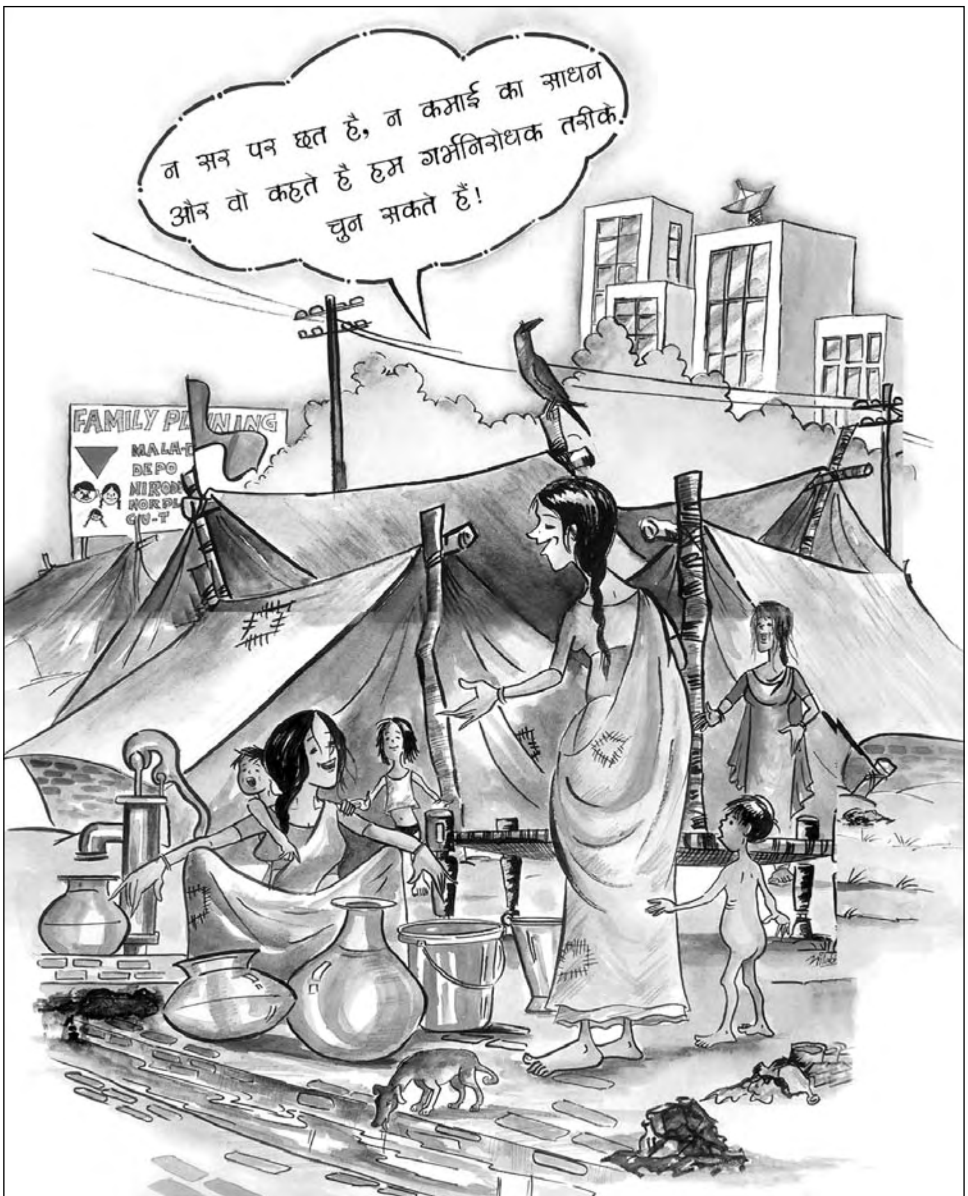

साभार: समा

प्रसव और प्रसूति

जेनिट चावला

दिल्ली चाइल्डबर्थ नेटवर्क (डीसीएन) की स्थापना मुंबई की प्रथम बर्थ इण्डिया कांफ्रेंस के तुरन्त बाद हुई थी। इस नेटवर्क के माध्यम से जागरूक नागरिक अपने खुद के प्रसूति अनुभवों और जचगी के लिए सिज़ेरियन ऑपरेशन के इस्तेमाल की बढ़ती संख्या को लेकर चिंतित थे। बर्थ इण्डिया के ज़रिए प्राकृतिक प्रसव के शारीरिक और मनोवैज्ञानिक फायदों का विस्तार किया जाता है। यह संगठन प्राकृतिक प्रसव से जन्मे बच्चों और उनकी माताओं के स्वास्थ्य के आंकड़े और वैज्ञानिक पुख्ता सबूत इकट्ठे करके आम लोगों में इनका वितरण करता है जिससे प्राकृतिक जचगी के लिए औरतों को प्रोत्साहित किया जा सके।

इसी कड़ी में डीसीएन ने दिल्ली में प्रथम चाइल्डबर्थ फ़िल्म समारोह का आयोजन किया। पेशेवरों और नागरिकों का यह समूह सुरक्षित और सहयोगी प्रसव के महत्व पर समाज का ध्यान आकर्षित करना चाहता है। मातृत्व केन्द्रित नज़रिए को अहम मानते हुए यह समूह सुरक्षित प्रसव के साथ-साथ जचगी के दौरान औरतों की शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और आत्मिक ज़रूरतों को भी अहमियत देता है।

समारोह में दो महत्वपूर्ण डॉक्यूमेंटरी फ़िल्में दिखाई गईं। पहली फ़िल्म का नाम था *बॉर्न ऐट होम* जिसे भारत की समीरा जैन से बनाया था। दूसरी फ़िल्म थी *द बिज़नेस ऑफ़ बीइंग बॉर्न* जिसकी निर्देशक संयुक्त राष्ट्र अमरीका की ऐबी एपस्टीन हैं। दोनों फ़िल्में प्रसव से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं को उठाती हैं। पहला, औरत को जचगी उसके सांस्कृतिक परिवेश पर निर्भर करती है। दूसरा, चाहे औरत किसी भी सांस्कृतिक परिवेश में जन्म दे उसका अनुभव केवल उस परिवेश द्वारा नियंत्रित नहीं हो सकता।

बॉर्न एट होम

बॉर्न ऐट होमः 2000, अंग्रेज़ी, 60 मिनट
निर्देशकः समीरा जैन

इन्हीं दो पहलुओं को आगे बढ़ाती हुई फ़िल्म *बॉर्न ऐट होम* उत्तर भारत, राजस्थान, बिहार, दिल्ली की एक बस्ती में प्रचलित देशज प्रसूति विधाओं और व्यवहार को जांचती है। सामाजिक सच्चाई और प्रसव के जाने-अनजाने राज़ के बीच यह फ़िल्म पारंपरिक दाइयों और मिडवाइफ़ के बारे में भी बात करती है। निम्न वर्ग की यह गरीब औरतें जो भारत में लगभग 50 प्रतिशत प्रसव कराती हैं, प्रसव की सूक्ष्म बारीकियों से बखूबी वाकिफ़ हैं। उनके तरीके सर्वव्यापी होते हैं और उनकी नज़र में बच्चे की पैदाइश जीवन आगे बढ़ाने की प्रक्रिया है, न कि किसी रोग की चिकित्सा। पर उनके इस कौशल को मुख्यधारा चिकित्सा शास्त्र द्वारा सम्मान और मान्यता नहीं मिलती। इस फ़िल्म में निर्देशक दाइयों के हुनर, जानकारी, मानवता, रिवाजों और उनके कठोर माहौल का सजीव चित्रण दशकों के सामने प्रस्तुत करती है।

फ़िल्म कुछ अहम प्रश्नों को हमारे समक्ष उठाती है— भारत में मौजूद एक लाख पारंपरिक दाइयों के हुनर को राज्य व सरकार मान्यता क्यों नहीं देती? एक दाई द्वारा बच्चे की नाल काटने के काम को "घोर महापाप" क्यों समझा जाता है? यह खूबसूरत और सशक्त महिलाएं समाज के इस वर्ग, जाति और जेंडर भेदभाव के सामने खुद को इतने आत्मविश्वास

और सम्मान के साथ कैसे खड़ा रखती हैं? और साथ ही एक अनकहा सा सवाल, इन बुजुर्ग दाइयों के बाद ग्रामीण औरतों की प्रसूति में कौन मदद करेगा? फ़िल्म में एक दाई की पोती यह हताशा व्यक्त करती है कि उसने अपनी दादी से यह काम क्यों नहीं सीखा। उसके अनुसार यह काम इतना हीन था कि वह उसे सीखना नहीं चाहती थी। पर मात्रिका और जागोरी के चेतना जागृति कार्यक्रम के बाद उसकी नज़र में इस पारंपरिक हुनर के लिए महत्व और मान दोनों बढ़ गए हैं।

द बिज़नेस ऑफ़ बींग बॉर्नः अंग्रेज़ी, 83 मिनट

निर्देशकः ऐबी ऐपस्टीन

द बिज़नेस ऑफ़ बींग बॉर्न के ज़रिए निर्देशक ने बच्चे के जन्म को एक जीवन का अभिन्न हिस्सा, एक जीवनदान और करिश्मे की तरह पेश किया है। साथ ही फ़िल्म दिखाती है कि अमरीका में प्रसूति एक बड़ा बिज़नेस भी है। अमरीका की अभिनेत्री रिकी लेक ने अपने पहली जचगी के बाद निर्देशक ऐबी ऐपस्टीन को अमरीकी औरतों के प्रसव के तरीकों पर फ़िल्म बनाने के लिए तैयार किया। इस फ़िल्म में ऐबी ने दिखाया है कि न्यूयार्क शहर की गर्भवती महिलाएं किस प्रकार अपने बच्चे को जन्म देने के तरीकों पर विचार-विमर्श करती हैं। इनमें से कुछ महिलाएं कारा मुहलहान, एक कुशल मिडवाइफ़ की मदद लेती हैं जो उनके साथ अपने प्रसव की यादें और अनुभव गर्भवस्था के दौरान, फ़िल्म के माध्यम से बांटती है।

फ़िल्म में प्रसव के "बिज़नेस" के साथ-साथ बच्चे के जन्म के अलग-अलग तरीकों का भी ब्योरा है। हर अनुभव अपने आप में अनूठा है, हर एहसास खूबसूरत और आश्चर्यजनक भी है। इन औरतों के लिए बच्चे का जन्म एक बेहद शारीरिक चुनौती देने वाला अनुभव है। साथ ही यह उनके जीवन का एक बेहद भावनात्मक एहसास भी है। फ़िल्म के दौरान ऐबी डॉक्टरों, विशेषज्ञों के साथ साक्षात्कार करती हैं जिसमें वह प्रसव के इतिहास, सांस्कृतिक परिवेश, और अर्थशास्त्र को समझने-समझाने का प्रयास करती हैं।

फ़िल्म के ज़रिए जो बुनियादी प्रश्न उठाया गया है वह है — क्या प्रसव को एक प्राकृतिक जीवन प्रक्रिया की तरह देखा जाना चाहिए या फिर इसे एक चिकित्साय

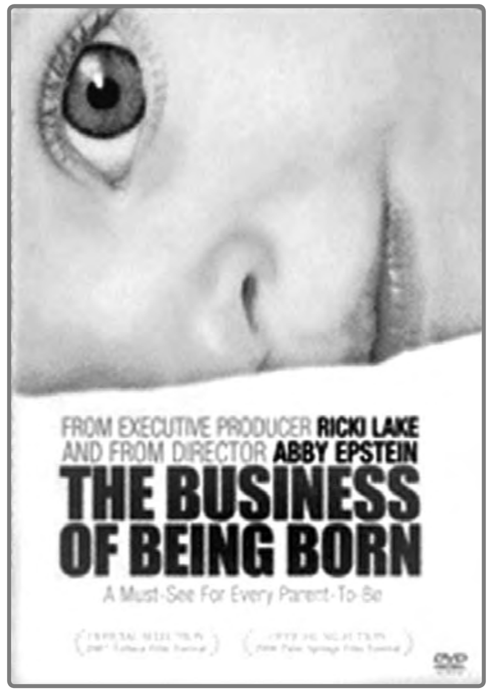

आपातकालीन सेवा माना जाना चाहिए? ऐबी ने फ़िल्म में कुछ चौंकाने वाले जवाब भी पेश किए है जिनमें उनके अपने प्रसव के अनुभव भी शामिल हैं।

बड़ी हैरत की बात है कि हम मॉडर्न शिक्षित महिलाएं प्रसव के विषय में इतना कम जानती हैं। मेरा मतलब प्रसव की तकनीक या चीर-फाड़ से नहीं है। प्रसव में मदद करने वाली दाइयां भी इन तकनीकों के बारे में नहीं जानती होंगी, शायद उन्होंने इन 'विषयों' को कभी पढ़ा नहीं होगा पर उनके हाथों की 'तकनीक', रिवाज, तौर तरीके, जड़ी-बूटी की जानकारियां और हर तरह के प्रसव से जूझने के अनुभव पूरी तरह समाज से जुड़े और जानकारी युक्त होते हैं। और हमारे जैसे उच्च शिक्षाविद चुपचाप सर्जरी करने वाले डॉक्टरों की ओर मुड़ जाते हैं। ऐसे डॉक्टर जो प्राकृतिक प्रसव के बारे में ज़्यादा नहीं जानते और अक्सर अच्छे से अच्छे अस्पतालों में हम "सिज़ेरियन" प्रसव के लिए मजबूर हो जाते हैं। (दिल्ली में लगभग 80 प्रतिशत प्रसव सिज़ेरियन होते हैं।)

इन दोनों फ़िल्मों को देखने के बाद हम पुनः सोचने को मजबूर हो गए हैं — आखिर मां बनना क्या मायने रखता है, कैसे इस अनुभव में हम सशक्त और समर्थ महसूस करें आहत और तकलीफ़ में नहीं।

लेख सहयोगः कृति टीम

लोक स्वास्थ्य परम्परा

सुशीला डी. सिंह

आमतौर पर जब हम बीमारी के उपचार की बात करते हैं तो हमारी नज़रों के सामने दो तस्वीरें आती हैं। एक चिकित्सक की जो जानकार और कुशल है। तथा दूसरी मरीज़ की जो असहाय, निर्बल है व जिसे रोग की जानकारी नहीं है; उसे वही करना है चिकित्सक जो कहे। परन्तु संपूर्णात्मक स्वास्थ्य संवर्धन में केवल शरीर का उपचार नहीं बल्कि मन का भी समावेश होता है। गुणी/वैध और उपचार के लिए आने वाले व्यक्ति का संबंध समानता तथा दोस्ती का होता है। उपचार की प्रक्रिया में दोनों सक्रिय रूप से जुड़ते हैं और इसके फलस्वरूप दोनों को लाभ होता है।

औद्योगिक क्रांति के पूर्व उत्पादन और प्रजनन की भूमिकाएं एक ही छत के नीचे निभाई जाती थीं। यह परंपराएं ऐसी थीं जो निरन्तरता की सहायक थीं और इनमें महिलाओं की एक महत्वपूर्ण भूमिका थी। कालान्तर में चिकित्सा क्षेत्र में आधुनिक विज्ञान का प्रभुत्व स्थापित हुआ और इस प्रक्रिया में महिलाएं उपेक्षित होती गईं। पर महिलाएं लोकज्ञान और कौशल की कड़ी हैं जिन्हें दाई मां, वैध, गुणी के नाम से जाना जाता है।

भारत के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए पारम्परिक दाई ही एक मात्र सेवादाता होती है। भारत में आज भी 70-80 प्रतिशत प्रसव घर में दाई करवाती है, खासकर उन इलाकों में जहां स्वास्थ्य सेवाओं तक लोगों की पहुंच सीमित है। ग्रामीण क्षेत्र में दाइयां प्रसव में अहम भूमिका निभाती हैं। ये गरीब महिलाओं की मदद करती हैं तथा उनके प्रति संवेदनशील होती हैं। दाई की ओर से पैसों की भी कोई मांग नहीं होती, लोग उसे जो खुशी से दे वह उसे स्वीकार कर लेती है। साथ-साथ महिलाओं की ज़रूरत के अनुसार दाई नज़दीक में उपलब्ध होती है। प्रसव के दौरान दाई द्वारा मां को दिये जाने वाली पारम्परिक देखभाल, मां के स्वास्थ्य के लिए फायदेमन्द है जैसे प्रसव पीड़ा के दौरान मां को चाय में गुड़ व घी डालकर पिलाना, तेल लगाकर कमर की मालिश करना, मां के सुविधा अनुसार बच्चा पैदा कराना (दाइयों द्वारा बैठाकर प्रसव कराना)। ज़रूरत पड़ने पर दाई पारम्परिक तरीके से आंबल भी निकालती है। प्रसव के बाद मां और बच्चे की सफाई व देखभाल करती है।

12 अप्रैल 2005 में *एनआरएचएम* का शुभारंभ किया गया था। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत महिलाओं को मुफ्त स्वास्थ्य सेवाएं देने का वादा किया गया है। अस्पताल में बच्चा पैदा करवाने हेतु 1400 रुपया भी दिया जा रहा है। लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में आज भी महिलाएं पर्याप्त मातृत्व स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित हैं।

आज भी महिलाएं दाई द्वारा घर में बच्चा पैदा कराना पसन्द करती हैं। लेकिन सरकार इन पारम्परिक दाइयों को कोई मान्यता नहीं दे रही है। अपने स्वास्थ्य की देखरेख के लिए औरतों की अपनी पारम्परिक समझ और ज्ञान धीरे-धीरे ख़त्म हो रहा है। यह महसूस हो रहा है कि भारतीय स्वास्थ्य व्यवस्था अधिकांश महिलाओं तक पहुंचती ही नहीं है। सरकारी स्वास्थ्य व्यवस्था में कर्मचारियों की कमी है। अस्पतालों में प्रसव के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं है, जैसे ब्लडबैंक, महिला डाक्टर, दवाइयां, औज़ार आदि स्वास्थ्यकर्मियों के महिलाओं के प्रति असंवेदनशीलता, दुर्व्यवहार एवं गांव से अस्पताल दूर होना, यातायात साधनों की भी कमी है। यह व्यवस्था महिलाओं के सिर्फ़ मातृ स्वास्थ्य पर केन्द्रित है। महिलाओं को अपने शरीर स्वास्थ्य और संसाधन पर नियंत्रण सीमित होते जा रहे हैं।

लोक स्वास्थ्य परम्पराएं दैनिक जीवन का अभिन्न हिस्सा होने के कारण महिलाओं की पहुंच में है। पारम्परिक स्तर पर स्वास्थ्य सम्भाल की कुशलताएं महिलाओं की ज़िम्मेदारी थी। महिलाओं ने यह कौशल सूक्ष्म निरीक्षण और व्यावहारिक अनुभव द्वारा हासिल किया था जिसे परिवार, समुदाय और समाज द्वारा महत्व दिया जाता था। महिलाएं अपनी स्वास्थ्य सुरक्षा अपने आप करती थीं। उन्हें जड़ी बूटियों का ज्ञान था, बदलते मौसम की समझ होती थी। अपनी सेहत की देखभाल मुख्य रूप से अपने हाथों में थी।

विज्ञान के आने से धीरे-धीरे लोगों के पुराने विश्वासों तथा तौर तरीके खत्म होने लगे। दुनिया में परम्पराएं बिखर गईं। स्वास्थ्य देखभाल के क्षेत्र में आधुनिक बाज़ारी दवाइयों का बोलबाला है और औरतें भूल ही गई है की वे इलाज कर सकती हैं। परन्तु जहां परम्पराएं जीवित हैं वहां आज भी महिलाओं के पास इलाज करने का हुनर है।

अंग्रेज़ी दवाइयों तथा स्वास्थ्य देखभाल व्यवस्था को संस्थागत व वस्तुगत कर दिया गया है। लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं बाज़ार से खरीदनी पड़ रही हैं। विकास तथा जंगलों के कटने से इलाज करने वाली जड़ी बूटियों के स्थानीय संसाधन नष्ट हो रहे हैं। हवा पानी और ज़मीन के प्रदूषण के कारण रोग प्रतिकारक क्षमता खत्म होती जा रही है। विदेशी खाद के प्रयोग व सड़क व बड़ी इमारतें बनने से उपजाऊ ज़मीन कम हो गई है जिससे उत्पादन कम हो रहा है। कीमतें बढ़ जाने से भोजन मंहगा और पहुंच से बाहर हो गया है। ऐसे हालात में गरीब पहले से और अधिक गरीब हो रहे हैं। उनकी स्वास्थ्य देखभाल तक न पहुंच रहती है, न उपलब्धता होती है। और न उसे खरीदने लायक पैसा होता है।

भुखमरी के शिकार गरीबों को कुचलती हुई बड़ी कम्पनियां यहां पर आकर जड़ी बूटियों की देसी जानकारी खरीद कर उन्हें बोतल बन्द रूप में पेश करके पैसा कमाती हैं। उदाहरण के तौर पर एलोवेरा (पतकुआँर) महिलाओं की प्रजनन सम्बंधी कई बीमारियां जैसे माहवारी में दर्द, सफेद पानी, जलना, कटने आदि में बहुत उपयोगी है। लेकिन आज विदेशी कम्पनियां इसे सौंदर्य प्रसाधनों के रूप में पेश करके पैसा कमाती हैं। हमारी संस्कृति में परम्परा से पीढ़ी दर पीढ़ी महिलाओं को देखभाल करने के तरीके सिखाती आई हैं। लेकिन आधुनिक, शहरी, एकल परिवारों व सामाजिक अकेलेपन के माहौल में, देखभाल का महत्व कम हो गया है तथा लोगों की अंग्रेज़ी दवाइयों व डाक्टरों पर निर्भरता बढ़ गई है।

लोक स्वास्थ्य परम्पराओं का इस्तेमाल करके महिलाएं अपने स्वास्थ्य की देखभाल कर सकती हैं जिससे अपने स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा की सम्भावना कम हो जाती है। महिलाएं बीमारी की पहचान, उपचार के लिए दवाई तैयार करने की प्रक्रिया में निरन्तर शामिल होती हैं। उपचार हेतु निर्णय भी स्वंय लेती हैं जिससे अपने शरीर, स्वास्थ्य और संसाधन पर नियंत्रण बढ़ता है और स्वास्थ्य संभाल में आत्मनिर्भरता तथा निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि होती है। महिलाएं इस ज्ञान, अनुभेव और कौशल को एक दूसरे के साथ बांटती हैं। वर्ग और जाति का भेद न मानकर वे एकजुट होती हैं जिससे सामूहिक सहयोग प्राप्त होता है। समुदाय में महिला के इस ज्ञान व कौशल को मान्यता देकर हम महिलाओं को सक्षमता की ओर ले जा सकते हैं ताकि महिला केन्द्रित व जेन्डर संवेदनशील स्वास्थ्य सेवाओं पर महिलाओं की पहुंच व नियंत्रण और अधिक मज़बूत हो सके।

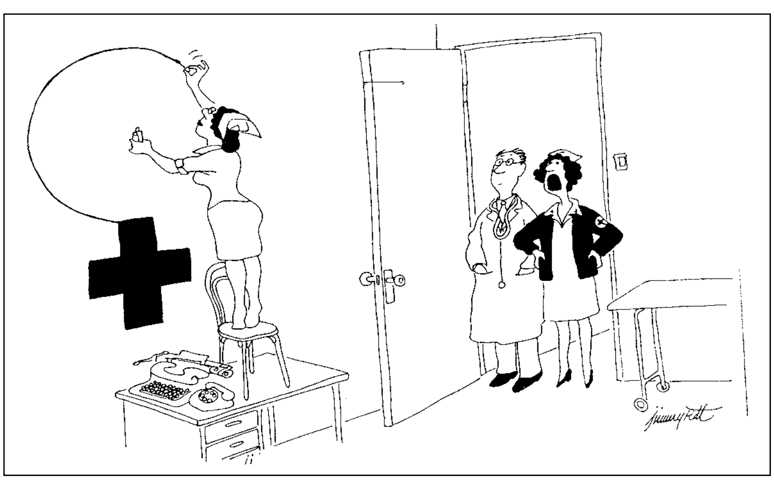

साभार: लॉफिंग मैटर्स, जागोरी

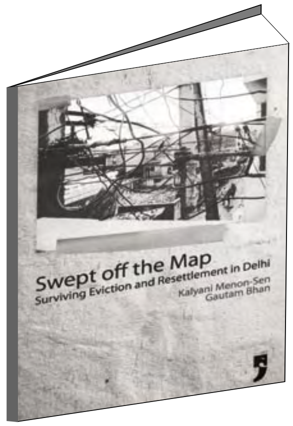

स्वैप्ट ऑफ़ द मैपः सर्वाइविंग एविक्शन एण्ड रीसेटलमेंट इन डेल्ही

लेखन : कल्याणी मेनन-सेन व गौतम भान
प्रकाशन : योडा प्रेस
सहयोग : जागोरी
पृष्ठ : 200
मूल्य : 250/-
भाषा : अंग्रेज़ी

जब किसी प्राकृतिक विपदा से आपका मकान उजड़ जाता है तो हंम दोष प्रकृति पर मड़ देते हैं। पर जब एक बुलडोज़र से आपका घर ढहाया जाता है क्योंकि 'शहर' नहीं चाहता कि आप वहां बसे रहें तब दोषी करार किसे दिया जाए?

जब यह दलील दी जाए कि वह ज़मीन जहां आप एक लम्बे अर्से से रहते हैं अब 'सार्वजनिक कार्यों' के लिए इस्तेमाल होगी, तब जवाबदेही किसकी होगी?

जब आपके पास दो ही विकल्प हो- अपना सब कुछ समेट कर कहीं और चले जाएं या फिर मर-खप जाएं, तब कौन सा रास्ता चुनें? अपनी आजीविका, सुरक्षा और समुदाय को खोकर आप दोबारा कैसे बस पाएंगे?

हमारे शहरों की सफाई का जो अभियान सरकार द्वारा चलाया जा रहा है उसमें गरीबों के लिए कोई जगह नहीं है। दिल्ली को एक 'वर्ल्ड क्लास सिटी' बनाने की कीमत गरीबों को चुकानी पड़ रही है। क्या हम ऐसे शहर की कल्पना नहीं कर सकते जहां सभी नागरिकों के लिए जगह हो?

कुछ इसी तरह के सवालों के जवाब खोजने की कोशिश इस किताब में की गई है। यह किताब 2004 में यमुना पुश्ता में रहने वाले 35000 परिवारों के पुनर्वास का दस्तावेजीकरण है। पर्यटन मंत्रालय इस इलाके को एक आकर्षक पर्यटन केन्द्र बनाना चाहता था जिसके चलते इन परिवारों को बवाना पुनर्वास कॉलोनी में जाने का आदेश दिया गया। बवाना में भी केवल उन 16000 परिवारों को प्लॉट दिए गए जिनके पास सभी कानूनी दस्तावेज मौजूद थे।

यह पुस्तक 2577 परिवारों के शोध पर आधारित है। पुनर्वास का इन परिवारों के जीवन, रोज़गार और पर्यावरण पर क्या प्रभाव है, इसे एक नारीवादी नज़रिए से देखने की यह कोशिश है।

प्रतियां मंगवाने के लिए संपर्क करेंः
महावीर सिंह, जागोरी
दूरभाषः 011-26691219/20 email: distribution@jagori.org

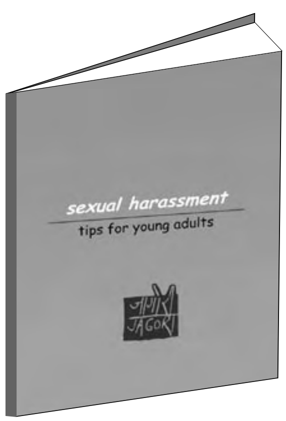

सेक्सुअल हैरेसमेंटः टिप्स फॉर यंग अडल्ट्स

प्रकाशन : जागोरी
पृष्ठ : 16
भाषा : अंग्रेज़ी
निःशुल्क वितरण

जागोरी का *सुरक्षित दिल्ली अभियान* समाज के विभिन्न तबकों की सहभागिता से दिल्ली को औरतों के लिए सुरक्षित बनाने के लिए प्रतिबद्ध है। इसी शृंखला में यौन उत्पीड़न पर जानकारी प्रदान करती यह छोटी सी हैंडबुक प्रस्तुत है। हैंडबुक में कुछ रणनीतियां दी गई हैं जिससे लड़कियों व औरतों में इसकी समझ बन सके और वे विभिन्न परिस्थितियों से मुकाबला कर सकें।

प्रतियों के लिए सम्पर्क करेंः safedelhi@jagori.org